डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली

स्वर्णिम साधना-सूत्र

स्वर्णिम साधना सूत्र

आशीर्वाद

डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली

एस-सीरीज़

© मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान

संकलन एवं सम्पादन
अरविन्द श्रीमाली

प्रकाशक
मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान
डॉ० श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी,
जोधपुर - ३४२ ००१ (राज.)
फोन : 0291-432209, फैक्स : 0291-432010

द्वितीय संस्करण	:	गुरु पूर्णिमा 2001
प्रति	:	5000
मूल्य	:	40/-
मुद्रक	:	आर. एस. आफसेट प्रिन्टर्स, 487/84, पीरागढ़ी दिल्ली-28, फोन: 5262040

शब्द ब्रह्म है और वेदों से लेकर आज तक सभी योगियों, ऋषियों, महर्षियों और संतों ने उन्हीं शब्दों का प्रयोग अपने तरीके से किया है, जिन शब्दों का प्रयोग वेदों और उपनिषदों में किया गया है, उन्हीं शब्दों का प्रयोग मीरा, कबीर, तुलसी और रैदास ने भी किया है, क्योंकि शब्द तो शाश्वत हैं।

यदि किसी भी व्यक्ति या महापुरुष के शब्दों और भावों से पुस्तक में वर्णित शब्दों और भावों का साम्य दिखाई दे या अनुभव होने लगे, तो यह एक संयोग है। मैं उन सभी ज्ञात-अज्ञात महापुरुषों के शब्दों का, भावों का और उनके विचारों का ऋणी हूं, क्योंकि उन सभी के साहित्य और भावों का मेरे चित्त पर गहरा असर रहा है।
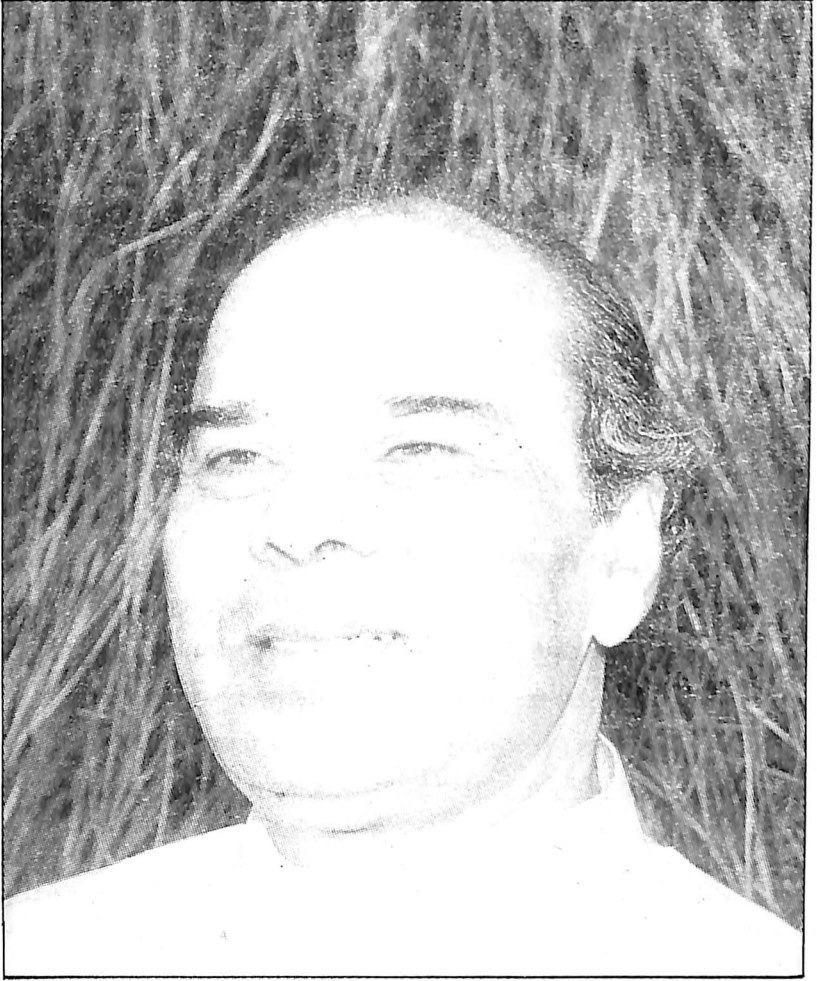
पूज्य गुरुदेव
डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली

अनुसरण

आप्तवाक् . . .

हेतवे जगतामेव संसारार्णव सेतवे।
प्रभवे सर्वविद्यानां शम्भवे गुरवे नमः।।

"गुरु ही जगत की उत्पत्ति के मूल कारण हैं, वही संसार सागर को पार कराने वाले सेतुरूप हैं तथा सभी विद्याओं की उत्पत्ति का एकमात्र हेतु श्री गुरु ही हैं, ऐसे शिव स्वरूप कल्याणकारी श्रीगुरु के चरण-कमलों में नमन है।"

साधना पथ पर अग्रसर होने वाले साधकों तथा कुण्डलिनी जागरण के इच्छुक सत्य के जिज्ञासुओं को सही मार्गदर्शन देना तथा उनमें व्याप्त विविध दोषों से मुक्त करना ही श्रीसद्‌गुरु का एकमेव कार्य है।

अपने इसी लक्ष्य को पूर्ण करने के लिये ही गुरु साधकों के जीवन को तीन आयामों में विभाजित कर देते हैं —

निश्चित लक्ष्य

प्रत्येक व्यक्तिचाहे वह समाज के किसी भी क्षेत्र का हो, एक निश्चित लक्ष्य को ले कर ही आगे बढ़ता है। विभिन्न व्यक्तियों के विभिन्न प्रकार के लक्ष्य होते हैं, जैसे – किसी का लक्ष्य करोड़पति बनना हो सकता है, तो किसी का शरीर को बलिष्ठ बनाये रखना हो सकता है। इसी प्रकार साधक का एकमात्र लक्ष्य होता है – "अपने इष्ट का साक्षात्कार कर उसमें लीन होना, पूर्णतः समर्पित हो जाना।"

निश्चित जीवनचर्या

व्यक्तिको अपने निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिये आगे तो बढ़ना ही चाहिए और सतत् प्रयत्नशील भी रहना ही चाहिए, किन्तु निश्चित जीवनचर्या अर्थात् निर्धारित कार्यक्रम के बिना तो उस व्यक्ति का प्रयास उसी प्रकार हो जायेगा, जैसे कि वह अंधेरे में कमरे का दरवाजा ढूंढ़ने के लिये हाथ-पैर मार रहा हो। अतः अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये आवश्यक है, कि निर्धारित कार्यक्रम रखें, जीवन की चर्या को सुनियोजित ढंग से संचालित करें, क्योंकि बिना किसी निश्चित योजना के आगे बढ़ने वाले व्यक्तिके सारे प्रयास और उस प्रयास में प्रयुक्तहोने वाली शक्तिव्यर्थ हो जायेगी। बिना निश्चित कार्यक्रम के जीवन के किसी भी क्षेत्र में उन्नति करना अत्यन्त कठिन है।

एक साधारण व्यक्तिबहुत ही सुगमता से अपने कार्यक्रम को निर्धारित कर सकता है . . . किन्तु एक साधक के लिये अपनी जीवनचर्या को निश्चित करना उतना ही दुष्कर है, जितना कि समुद्री तूफान के बीच से किश्ती को निकाल कर किनारे पर ले जाना।

सुनिश्चित विचार

परन्तु श्रीगुरु ने इस मुश्किल को अत्यन्त सहजता से पार करने के लिये भी एक आश्रय बताया है . . . और वह है – 'विचारों की दृढ़ता'। यह एक ऐसा आश्रय स्थल है, जहां विश्राम कर साधक

आगे बढ़ने की शक्ति प्राप्त कर लेता है, क्योंकि साधक के जीवन में अक्सर ऐसे क्षण आते ही हैं, जब उसे इस सहारे की आवश्यकता पड़ती है, कभी-कभी तो ऐसे क्षण दिन में कई बार भी आ जाते हैं।

अपने इस आश्रय स्थल का निर्धारण करते समय साधक को यह सदैव ध्यान रखना चाहिए, कि आध्यात्मिक क्षेत्र में उन्नति धीरे-धीरे और क्रमशः होती है। आध्यात्मिक उन्नति आन्तरिक होती है और ऐसा होने में अत्यधिक आन्तरिक द्वन्द्व होता है। इस द्वन्द्व में द्विविध पहलू होते हैं —

1. आक्रमण
2. सुरक्षा

साधना के मार्ग पर बढ़ने वाले साधक को प्रत्येक कदम पर अनेक प्रकार के आक्रमणों का सामना करना पड़ता है। कभी यह आक्रमण सामाजिक होता है, तो कभी मानसिक। इससे सुरक्षित रहना अत्यधिक आवश्यक है और इसके लिये प्रबलतम त्याग की भावना का होना भी आवश्यक है; यदि ऐसा नहीं है, तो साधना-पथ पर आगे बढ़ना दुष्कर ही नहीं, असम्भव भी हो जाता है।

'विवेक' और 'सुविचार' ही वे आयुध हैं, जिनका प्रयोग कर साधक इन आक्रमणों से अपनी सुरक्षा कर सकता है। इसके साथ ही 'वैराग्य' और 'सद्गुरु का संरक्षण' प्राप्त होना भी नितान्त आवश्यक है।

साधक के विचार की पृष्ठभूमि निर्धारित करने में अत्यधिक सहायक होता है — गुरु द्वारा दीक्षा प्राप्त कर सतत् गुरु मंत्र जप करते रहना। सतत् अभ्यास और सतत् गुरु मंत्र जप के बिना साधक को आध्यात्मिक जीवन में सफलता की आशा नहीं रखनी चाहिए। जब साधना में असफल हो कर साधक सद्गुरु के सामने आता है, तो गुरु यही कहते हैं — "यथेष्ट सफलता नहीं प्राप्त हो सकी, इसलिये खिन्न न हो, अपितु पुनः-पुनः प्रयासरत रहो।"

गुरु ऐसा इसलिये कहते हैं, क्योंकि यही तो है वह आश्रय

स्थल, जहां विश्राम कर विचार उदात्ततम हो जाते हैं, साधक नवीन स्फूर्ति और शक्तिप्राप्त कर लेता है।

जिस तरह कछुआ आक्रमण की आशंका होने पर अपने अंगों को अपने भीतर समेट लेता है और सुरक्षा का आभास होने पर पुनः पूर्ववत् अपनी यात्रा प्रारम्भ कर देता है; ठीक इसी प्रकार गुरु-कृपा का कवच पहन कर साधक अपने लक्ष्य की यात्रा सुगमता से पूरी कर सकता है।

दोनों में यदि अन्तर है, तो मात्र इतना ही, कि कछुआ कवच से बाहर आने के पश्चात् भी पूर्ववत् रहता है, किन्तु साधक हर बार पहले की अपेक्षा अधिक प्रबल हो कर बाहर आता है, क्योंकि श्रीसद्गुरु ने साधना के प्रत्येक क्षेत्र के, प्रत्येक आयाम का रहस्योद्घाटन किया है। एक भी ऐसा सूत्र या रहस्य नहीं है, जिसे उन्होंने अपने शिष्यों के समक्ष प्रस्तुत न किया हो, ऐसा है ही नहीं। उनकी कृपा प्राप्त कर प्रत्येक साधना, चाहे वह सौम्य साधना हो या उग्र साधना, सिद्ध हो जाती है, इसमें कोई दुविधा की बात है ही नहीं।

मानव सभ्यता के प्रारम्भ से ही मनुष्य शांति की खोज में भटकता रहा है, सदैव मन की शांति के लिये विभिन्न उपाय करता ही रहता है। इन उपायों की खोज में उसे प्रतिपल त्रितापों से प्रताड़ित होना ही पड़ता है और ये त्रिताप हैं – शोक, भय और क्लेश।

परन्तु जब गुरु कृपा का अवलम्बन प्राप्त हो जाता है, तब न शोक रहता है, न भय रहता है और न ही क्लेश का अंशमात्र भी शेष रह पाता है। इसके साथ ही कर्मों का भार भी समाप्त हो जाता है और तब साधक का एकमात्र लक्ष्य रहता है – स्वात्म को पहिचान कर उसे श्रीगुरु-चरणों में, इष्ट में समर्पित कर देना, क्योंकि साधक के लिये सभी तीर्थ-धाम श्रीगुरु-चरण ही होते हैं। इन्हीं चरणारविन्दों में ही तो लहराते हैं समस्त महासिन्धु, जिसमें साधक की जीवन सरिता समाज व मन के समस्त बन्धनों का त्याग कर, आनन्द से उछलती-कूदती अमरत्व से एकाकार हो जाती है, जिसके उपरान्त शांत हो जाती है त्रिताप की ज्वाला।

साधक के हृदय में ही नहीं, अपितु प्रत्येक मानव के हृदय में शांति व परमानन्द की प्यास सदैव बनी ही रहती है, जो कि परिलक्षित होती है व्यक्ति के प्रत्येक कार्य व उस कार्य के पीछे छुपी भावना से। यह सनातन सत्य है, कि अतिशय भाग्योदय होने पर ही मानव जीवन प्राप्त होता है . . . और इस प्रकार मानव जीवन को मनुष्यवत् व्यतीत करना स्वतः ही साधना है, क्योंकि उसके मानस में प्रतिक्षण उसी परब्रह्म का संगीत तरंगित होता रहता है, ध्वनित होता रहता है।

शिशु जन्म लेने के बाद जैसे-जैसे बड़ा होता है, विभिन्न प्रकार की शिक्षा ग्रहण करता है। धीरे-धीरे उसकी बुद्धि का विकास होता है, उसके अनुभव बढ़ते जाते हैं और वह अपनी दृष्टि को, विचार को सूक्ष्मतर करता हुआ अपनी जीवनचर्या को निर्धारित करता है; किन्तु जब वही व्यक्ति विवेक, त्याग, समर्पण और श्रद्धा से युक्त हो जाता है, तो उसे गुरु प्राप्ति, इष्ट प्राप्ति की लगन लग जाती है। इसके उपरान्त उसके द्वारा किया गया कार्य ही वास्तविक साधना है . . . और इस सचेतन साधना के द्वारा ही वह साधक अपने जीवन में त्वरित उन्नति प्राप्त करने लगता है।

इस प्रकार सचेतन साधना ही वह ईश्वरीय कृपा है, जिसके माध्यम से मनुष्य भवसागर से संतरण के लिये वह कुञ्जी प्राप्त कर लेता है, जिसके द्वारा ब्रह्म प्राप्ति का द्वार खुलता है, क्योंकि साधना ही वह सशक्त माध्यम है, जिसके द्वारा आत्म-ज्योति जाग्रत होती है।

गुरु कृपा व दीक्षा प्राप्त कर निरन्तर अदम्य उत्साह से साधनारत रहने पर स्वयं ही वह स्थिति प्राप्त हो जाती है, जब इष्ट का ध्यान, गुरु का ध्यान अनायास होने लगता है और साधक का तन-मन, प्रत्येक रोम-रोम अहर्निश मंत्र जप करने लगता है। ऐसी स्थिति प्राप्त होने का तात्पर्य है, कि व्यक्ति का आत्म ब्रह्म के दिव्य प्रकाश से आलोकित हो श्रीगुरु-चरणों में निमग्न हो गया है। तब वह साधक एक क्षण भी अपने प्रभु से अलग हो ही नहीं सकता, फिर साधक शनैः-शनैः सहस्रार से झरते हुए अमृत रस का आस्वादन करता है

और साधना की वह दिव्यतम अवस्था प्राप्त कर लेता है, जो ब्रह्मावस्था है, सिद्धावस्था है।

'परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी' ने अपने प्रवचनों में साधना के सभी आयामों पर प्रकाश डाला है और विधिवत् विवेचना भी की है, जिससे एक साधारण मनुष्य, अल्पबुद्धि प्राणी भी प्रयासरत हो साधना की वास्तविक अवस्था से अवगत हो सके। गुरुदेव ने अपने प्रवचनों में मात्र शास्त्रों, वेदों व उपनिषदों में वर्णित सिद्धान्तों का ही प्रतिपादन नहीं किया है, अपितु उन्होंने स्वयं के प्रयासों से, दीक्षाओं के द्वारा, साधनाओं के द्वारा साधक की हृदय-मंजूषा में निहित जीवन के अमूल्य रत्नों को प्राप्त कर लेने की क्रिया व मार्ग बतलाया है, जिस पर अग्रसर हो साधक अपने अभीष्ट को प्राप्त कर सकता है।

पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा प्रतिपादित साधना के प्रत्येक सूत्र को अपने मानस में दृढ़ता के साथ स्थापित कर निश्चय ही व्यक्ति नैतिक मूल्यों का पालन करता हुआ जीवन के परम लक्ष्य – ब्रह्मत्व से साक्षात्कार की ओर अग्रसर होता ही है और अपने जीवन के साथ ही साथ सम्पूर्ण विश्व के नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन को भी उन्नत बनाने में सहयोगी सिद्ध होता है।

प्रस्तुत ग्रंथ में पूज्य गुरुदेव से समय-समय पर प्राप्त साधनाओं तथा उनके प्रवचनांश को पूज्य गुरुदेव के शब्दों में ही व्यक्त किया गया है।

1

गुरु प्रार्थना

परम शाश्वतं नीलकण्ठं गुरुत्वम्

भगवान शिव ने जिस प्रकार सृष्टि की रक्षा करने
के लिए हलाहल को अपने कंठ में धारण कर
देवताओं को अमृत का पान कराया . . .
ठीक वही क्रिया तो गुरु को करनी पड़ती है,
शिष्य के अन्तरनिहित अज्ञान, अहंकार, पाप,
छल आदि दोष रूपी हलाहल को
अपने अन्दर धारण कर उसे ज्ञान रूपी अमृत का
पान कराते हैं . . .
शिव और गुरु की
क्रियाओं में साम्य होते
हुये भी भिन्नता है,
शिव ने तो केवल एक
बार ही विष को
कंठ में धारण किया था,
किन्तु गुरु को तो
प्रतिदिन, प्रतिपल
समस्त शिष्यों के विष को
अपने अन्तर में
धारण करना पड़ता है।

साधना के पथ पर अग्रसर होने से पूर्व हम साधनाओं के मूल सूत्रधार श्रीगुरु की प्रार्थना कर उनसे उनकी कृपा प्राप्त करें, क्योंकि नाम स्मरण अर्थात् प्रार्थना का अतिविशिष्ट महत्त्व है –

अशुभानि निराचष्टे तनोति शुभसंततिम्। स्मृतिमात्रेण यत्पुंसां ब्रह्म तन्मंगलं परम्।।
अतिकल्याणरुपत्वान्नित्य कल्याणसंश्रयात्। स्मर्त णां वरदत्वाच्च ब्रह्म तन्मंगलं विदुः।।

अर्थात् ''जिनके नाम के स्मरण मात्र से ही मानव के समस्त अशुभ, अमंगल दूर हो जाते हैं तथा 'कल्याण' की प्राप्ति होती है। उन्हीं गुरुदेव का ब्रह्म स्वरूप परम मंगलदायक है, वे अत्यधिक कल्याण स्वरूप तथा नित्य-कल्याण निकेतन हैं और अपने स्मरण करने वाले को अपनी शरण में ले कर समस्त सिद्धि तथा इच्छित वर प्रदान करते हैं। उन्हीं तत्त्वज्ञानी ब्रह्म के मंगलरूप की विज्ञजन वन्दना करते हैं।''

हे समस्त जग के उपास्य देव! हे सर्वव्यापक! हे अन्तर्यामी! हे असीम ज्ञान के प्रदाता गुरुदेव! मुझे अपनी कृपा कटाक्ष प्रदान करें, क्योंकि मुझे नहीं मालूम, कि आपकी वन्दना, आपकी पूजा किस प्रकार करूं? मेरे अन्दर इतना भी सामर्थ्य नहीं है, कि मैं साधना सम्पन्न कर सकूं। मैं परम दोषयुक्त हूं, मेरी समस्त इन्द्रियां अत्यधिक शक्तिशाली व मेरे ऊपर व्याप्त हैं, जिसके कारण मैं अत्यधिक अशांत हो गया हूं। हे गुरुदेव! मुझे शांति प्रदान कर अपनी भक्ति दीजिये, जिससे कि मैं अपने तन को आपकी सेवा में लगा सकूं और अपने मन को आपकी प्रेमसुधा में निमग्न कर सकूं।

मेरी इच्छा है, कि सदैव आपके श्रीमुख को चकोर की भांति निहारता रहूं। हे प्रेम सिन्धु! मेरी प्रार्थना को स्वीकार कर लें।

मैं जानता हूं, कि मेरा समर्पण सच्चा नहीं है, मेरा हृदय अत्यधिक कठोर पाषाणवत् है। मैं नहीं जानता, कि इसे कोमल कैसे बनाऊं, जिससे यह आपकी प्रार्थना कर सके और आप इसमें विराजमान हो सकें। मैं तो आपकी शरण में आ गया हूं, अब आप ही जानें, कि यह कैसे सम्भव हो सकेगा, कि मेरी आंखों से व्यर्थ के आंसू न टपकें, अपितु आंखों में आंसू आयें भी, तो वे आंसू आपकी ही याद के प्रेमाश्रु हों, मैं मिथ्या रुदन नहीं करना चाहता। अब मैं आपकी शरण में आ गया हूं, मैं आपका शिष्य हूं, अब आप ही जानें, कि मेरे द्वारा आपको क्या कार्य कराना है और कैसे कराना है, क्योंकि –

हे स्नेह और करुणा के आधार गुरुदेव! आप ही सच्चिदानन्द स्वरूप हैं, आप ही सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ हैं। हे गुरुदेव! आप ही सबके आदि और अंत हैं, यह चराचर जगत आपसे ही गतिमान व प्रकाशवान है। मैं आपकी शरण में हूं। हे गुरुदेव! मुझे साहस, शांति, करुणा व अपने प्रकाश से आलोकित करें, जिससे मुझे उदारता, समत्व, श्रद्धा व भक्ति प्राप्त हो। मैं अहंकार, द्वेष, काम, क्रोध, लोभ से रहित हो कर आपका दर्शन कर सकूं और अपने अधरों पर प्रतिपल आपका नाम अंकित कर सकूं। मैं आपका एक अकिंचन सेवक हूं; याचक बन कर आपके द्वार पर आया हूं। मुझे अपनी सबल भुजाओं का सहारा दे कर अपनी शरण में ले लें।

यदि आपकी कृपा हो जायेगी, तो आपका यह शिष्य असम्भव को सम्भव बना सकता है। मेरा अन्तःकरण, मेरा रोम-रोम सिर्फ आपका नाम स्मरण करता रहे और आपके श्रीचरणों की सेवा में रत रहे – मेरी एकमात्र यही इच्छा है, यही पिपासा है, यही प्रार्थना है। मेरी इन इच्छाओं को सबल बना दें, जिससे मैं सांसारिक प्रलोभनों का संवरण कर सकूं तथा इन्द्रिय जनित इच्छाओं का दमन कर सकूं। मेरी समस्त बुराइयों का नाश हो, जिससे आपके सम्मुख आत्मार्पण को सत्य बना सकूं। हे प्रभु! मेरे हृदय में आसीन हो जाये और एक क्षण के लिये भी मुझसे दूर अन्यत्र न जायें, मेरे रोम-रोम को अपने काम में ले कर कृतार्थ करें।

साधना

एके साधै सब सधै

इस देश में इतने अधिक देवी-देवता हैं, कि उनमें से किसी एक का चयन करना अत्यन्त कठिन है। और फिर तुम्हें किसी देवता की साधना बताऊं भी तो, तुम्हारे धर्म की पक्कीं दीवारें तुम्हें रोक देंगी, इसलिए सावधानी पूर्वक तुम्हें चयन करना होगा, उस देवता, उस साधना का जो पूर्णता दे सके।

– तुम्हारे चर्म-चक्षुओं में दिव्य शक्तियों को देखने की क्षमता ही नहीं है। किन्तु यह क्षमता गुरु की आंखों से तुम्हें प्राप्त हो सकती है। आवश्यकता है अपने अन्दर गुरु को उतार देने की, गुरु चरणों में समर्पण कर देने की। – और ऐसा होते ही सभी देवताओं की साधना स्वत: ही पूर्ण हो जायेगी।

साधना शब्द की उत्पत्ति 'साध' धातु से हुई है। 'साध' का अर्थ है – प्रयत्न। इस प्रकार किसी विशिष्ट कार्य के लिये प्रयत्न करना ही साधना है और जो प्रयत्न करता है, वह 'साधक' है। साधना के उपरान्त अभीष्ट की प्राप्ति ही 'सिद्धि' है और साधना के माध्यम से पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने वाला ही 'सिद्ध' है। अतः स्पष्ट है, कि कोई भी आध्यात्मिक प्रयत्न साधना है।

श्रद्धा, प्रेम व समर्पण की भावना के साथ परम उत्साह से युक्त हो कर की जाने वाली साधना ही मनोवाञ्छित पूर्णता प्रदान करती है। अनादिकाल से वर्तमान युग तक चाहे वह आद्य शंकराचार्य हों, वशिष्ठ, विश्वामित्र, अत्रि, कणाद, पुलस्त्य हों या भगवान राम या श्रीकृष्ण हों अथवा वर्तमान युग के सभी ऋषि, महर्षि, योगी, वैज्ञानिक, मार्गदर्शक तथा आचार्य, साधना के माध्यम से ही समाज में उत्कृष्ट व पूजनीय हो सके हैं।

साधना को प्रारम्भ करने से पूर्व किसी योग्य गुरु से, जो कि वास्तव में सद्गुरु हो, जो अपने शिष्य के आत्म को विकसित करने की क्षमता रखता हो, उनके द्वारा मार्गदर्शन प्राप्त कर ही इस मार्ग पर अग्रसर होना चाहिए। पुरातन काल से यह पूर्णतः स्पष्ट है, कि सभी तीर्थों का उद्गम स्थल श्रीगुरु ही हैं, सभी विद्याओं की उत्पत्ति उन्हीं के द्वारा हुई है। इसी कारण सभी ऋषि समस्त साधनाओं की शिरोमणि 'गुरु साधना' को ही सम्पन्न करते हैं। इसीलिये गुरु साधना ही प्रथमतः अपेक्षित साधना है।

गुरु साधना में सफलता प्राप्त कर लेने के बाद ऐसी कोई साधना शेष रहती ही नहीं है, जो गुरु साधना सम्पन्न साधक को सहज, सुलभ न हो। गुरु साधना ही मानव मात्र के लिये अति उत्तम योगोपासना भी है, जिसके द्वारा अन्तःकरण पवित्र हो पूर्ण सामर्थ्यवान हो जाता है। यही कारण है, कि समस्त महापुरुषों ने गुरु साधना को सर्वप्रथम सम्पन्न करने के लिये प्रेरित किया है।

चाहे गुरु साधना हो या अन्य किसी देवी-देवता की साधना हो, इसे सम्पन्न करने के लिये आत्मसंयम, अनुशासन, तप तथा ध्यान की आवश्यकता है, क्योंकि यही साधक के लक्ष्य प्राप्ति का समारम्भ है।

साधना करने से पूर्व अपने अन्दर निहित विविध दोषों और कमियों पर ध्यान दें और उन्हें प्रयत्न पूर्वक समाप्त करें। बिना किसी उतावलेपन के ध्यान का अभ्यास करें। आध्यात्मिक जीवन कठिन है तथा पग-पग पर बाधाएं हैं, अतः प्रत्येक क्षण सतर्कता पूर्वक उत्साह युक्त हो आगे बढ़ें।

साधना सम्पन्न करने से साधक के अन्दर स्वतः मन की एकाग्रता, मुदिता, शांति, संतोष, करुणा, निर्भयता, विवेक, निर्हंकारिता, निष्कामता व अन्तर्मुखी वृत्ति का विकास होने लगता है। ये सभी साधक की आध्यात्मिक उन्नति के सूचक हैं।

यदि कोई व्यक्ति यह सोचता है, कि उसके लिये सम्भव नहीं है, कि वह साधना सम्पन्न कर सके, तो यह उसकी मिथ्या धारणा है, क्योंकि नियमित मंत्राभ्यास व श्रीप्रभु के नामोच्चारण से उसकी अनास्था का नाश होता है तथा, ईश्वर, इष्ट व गुरु के प्रति आस्था का उदय होता है। आध्यात्मिक उन्नति की क्रिया धीमी, किन्तु सतत् होती है। साधना के प्रारम्भ में इसको परखना कठिन है, किन्तु परिणाम तो प्राप्त होता ही है और कुछ समयोपरान्त निश्चित क्रम व दृढ़ विचार से युक्त साधक को इसके सुफल प्राप्त होते ही हैं।

'कठोपनिषद्' के अनुसार सद्गुरु स्वयं उन व्यक्तियों को चुन लेते हैं, जो इस मार्ग पर चलने के इच्छुक होते हैं; उन्हें चुन कर साधना के पथ पर अग्रसर कर देते हैं और मार्ग में आने वाली कठिनाइयों को सहजता से दूर कर आगे बढ़ने के लिये आत्मार्पण जैसा अस्त्र दे देते हैं, जिसकी सहायता से साधक आगे बढ़ता रहे।

किन्तु आत्मार्पण इतना सहज नहीं है या वह वस्तु नहीं है, जो कुछ दिनों या महीनों में हासिल कर लिया जाये। मानव प्रकृति के अनुसार अहंकार एवं विभिन्न दोष साधक को पुरानी आदतों, कामनाओं तथा तृष्णाओं में आसक्त कर देते हैं, ये सभी मानव के ऐसे दुश्मन हैं, जो छिप कर वार करते रहते हैं। इसीलिये यह आवश्यक है, कि साधक गुरु चरणों में अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व का आत्मार्पण करे।

'भगवद्गीता' में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को यही उपदेश देते हैं, कि 'सम्पूर्ण भाव से मेरी शरण में आओ।' अतः स्पष्ट है, कि अपने चित्त, अहंकार, मन, बुद्धि तथा आत्मा को गुरु के श्रीचरणों में अर्पित कर देना चाहिए। आज तक जितने भी सिद्ध, साधक या भक्त हुए हैं, उन्होंने ऐसा ही किया है।

विविध कामनाएं, अहंकार, सर्वोच्च की भावना पग-पग पर साधक के आत्मार्पण का विरोध करते हैं, किन्तु इन विरोधों के बावजूद भी जो साधक आगे बढ़ता रहता है, उसके हृदय में गुरु कृपा प्रवाहित होती रहती है, जिससे वह साधक साधना के मार्ग पर अग्रसर होने के लिये दृढ़ बनता रहता है। जब गुरु शक्ति साधक के मन, कामना, तन व प्राण पर पूर्ण अधिकार कर लेती है, तब साधक द्वारा सम्पन्न की जा रही साधना में त्वरित गति आ जाती है।

जब कोई व्यक्ति प्रथम बार साधना प्रारम्भ करता है, तो मशीन या यों कहें, कि एक रोबोट की तरह संचालित होता है; किन्तु जब धीरे-धीरे वह साधक के जीवन का अंग बन जाती है, तो कोई अनावश्यक कार्यभार की तरह एहसास न हो कर सुख, साहस व मुदिता युक्त बन जाती है।

साधक के लिये आसन, प्राणायाम तथा बन्ध आदि का भी अभ्यास होना आवश्यक है, किन्तु मात्र ये ही आध्यात्मिक उन्नति या कुण्डलिनी जागरण नहीं सम्पन्न करा सकते हैं। इसके लिये आवश्यक है, कि साधक का मन त्याग युक्त हो, उसमें तीव्रता हो और हृदय की शुद्धता हो। यदि ये तीनों नहीं हैं, तो साधना में विफलताओं का प्राप्त होना आश्चर्यजनक नहीं है।

गुरु तथा इष्ट के प्रति पूर्ण विश्वास की भावना ही वह दृढ़ आधार है, जिसके सहारे साधक निश्चित ही आगे बढ़ता रहता है। संयम तथा साधना का

नित्य अभ्यास वे पंख हैं, जिनके सहारे साधक अध्यात्म के सर्वोच्च शिखर पर उड़ कर पहुंच सकता है। यदि साधक संयमी नहीं है, तो उसका इन्द्रियों पर नियन्त्रण न होने के कारण शक्ति का ह्रास हो जायेगा और साधक पतन को प्राप्त होगा।

निश्चय ही मन चञ्चल व अस्थिर होता है, किन्तु दृढ़ प्रतिज्ञ साधक को चाहिए, कि वह दृढ़ता पूर्वक मन की गति को नियन्त्रित कर साधना के प्रति अनुरक्त करे . . . और यही अभ्यास है। पतंजलि के योग सूत्र के अनुसार –

"तंत्र स्थितौ यत्नोऽभ्यासः"

अर्थात् "मन की वृत्तियों को अवरुद्ध करने का प्रयत्न करना ही अभ्यास है।"

योग सूत्र में ही पतंजलि आगे स्पष्ट करते हैं –

"स तु दीर्घकालमैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढ़भूमिः"

अर्थात् "साधक का आधार तब दृढ़ होता है, जब वह दीर्घकाल तक निरन्तर पूर्ण निष्ठा युक्त अभ्यास करता रहे।"

कहने का तात्पर्य यही है, कि आप अपनी साधना के प्रति लापरवाही न बरतें, क्योंकि कालान्तर में यह साधना आपके लिये अत्यधिक लाभदायक सिद्ध होगी और यह निश्चित है, कि आप नियमित अभ्यास से अवश्य ही आत्म साक्षात्कार व ब्रह्म साक्षात्कार कर ब्रह्म से एकाकार हो सकेंगे।

३

स्वर्णिम साधना सूत्र

१

एक बात का ध्यान रखो

साधना के पथ पर न तो पुरुष होता है और न कोई स्त्री वह एक सम्पूर्ण साधक होता है।

— और साधक की यात्रा शून्य से प्रारम्भ होकर 'ब्रह्म' तक पहुंचती है।

— और गुरु के माध्यम से ही ब्रह्म तक की यात्रा सम्पन्न की जा सकती है।

जिसने गुरु को जान लिया, उसने ब्रह्म को जान लिया; जो गुरु से एकाकार हो गया, वह ब्रह्म से एकाकार हो गया। और तुम्हें भी ब्रह्म से साक्षात्कार करने से कोई नहीं रोक सकता, होनी चाहिए तुम्हारे पैरों में ताकत, आंखों में चिनगारी और हृदय में बगावत।

साधना के बारे में पढ़ कर तथा लोगों से सुन कर लोग आधे-अधूरे ज्ञान के साथ ही साधना करने के लिये प्रयासरत हो जाते हैं, लेकिन पूर्ण ज्ञान न होने के कारण प्राय: ही उनको असफलता मिलती है और ऐसे लोग ही अपनी असफलता के कारणों पर ध्यान न दे कर साधना-पथ को ही एक धोखा, फरेब, छलावा और समय की व्यर्थ बरबादी जैसी उपमायें दे देते हैं।

कोई कुछ भी कहने के लिये स्वतंत्र है, किन्तु बुद्धिमान वही व्यक्ति होता है, जो सोच-विचार कर बोलता है और सोच-समझ कर ही किसी के प्रति अपनी धारणा बनाता है।

आप साधना करें, स्वयं करें, सम्बन्धित साधना के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर साधना करें, फिर इसके बारे में निर्णय लें। हां, साधना प्रारम्भ करने से पूर्व या साधना करते समय आप निम्न सूत्रों को ध्यान में रखेंगे, तो आप असफल हो ही नहीं सकेंगे –

साधना हेतु विशिष्ट दिवस का निर्धारण आवश्यक

जीवन में कुछ दिन ऐसे होते हैं, जिनका यदि उपयोग कर लिया जाय, तो पूरा जीवन जगमगाहट से भर जाता है। काल ज्ञान का तात्पर्य यह है, कि हम समय को पहिचानना सीखें। यदि ठीक समय पर ठीक कार्य कियो जाय, तो निश्चय ही उसका शुभ फल प्राप्त होता ही है। समय एक ऐसा पुरुष

है, जो सिर के पीछे आधे भाग में गंजा है और आगे के आधे भाग में लम्बे-लम्बे बाल हैं; यदि समय आते ही हम उसे पकड़ लेते हैं, तो वह पूरी तरह हमारे वश में हो जाता है, परन्तु यदि वह पास में से हो कर निकल जाता है, तो फिर उसे पकड़ना सम्भव नहीं होता है।

साधना के क्षेत्र में भी यही बात है। यदि साधना दिवस को ध्यान में रख कर साधना सम्पन्न करें, तो निश्चय ही अनुकूल फल प्राप्त हो जाता है और हमारे जीवन की सारी समस्याओं का समाधान हो जाता है। इसके अलावा अन्य दिनों में भी साधना सम्पन्न करने पर अनुकूल फल तो प्राप्त होता ही है, परन्तु समय की या उससे सम्बन्धित दिवस की महत्ता अपने आपमें अनन्यतम है।

साधना की सफलता का अनिवार्य सूत्र : दैविक बल

यदि सही रूप में देखा जाय, तो हमारा अब तक का बीता हुआ जीवन परेशानियों, बाधाओं, अड़चनों और कठिनाइयों से भरा हुआ है। हमें जीवन में जो कुछ सुख मिलना चाहिए, वह नहीं मिल पाया; हम जीवन में जो कुछ आनन्द लेना चाहते हैं, वह नहीं ले पाये और फलतः हम पद के लिये, धन के लिये और प्रभुता के लिये बराबर परेशान होते रहे, झगड़ते रहे, जरूरत से ज्यादा परिश्रम करते रहे; परन्तु हमें जो अनुकूल फल प्राप्त होना चाहिए, वह नहीं हो पाया।

इसका कारण यह है, कि व्यक्ति उन्नति तभी कर सकता है, जब उसके पास दैविक शक्ति हो। शक्ति की सहायता से ही व्यक्ति अपने जीवन में पूर्ण उन्नति एवं सफलता प्राप्त कर सकता है।

महाभारत काल में भी जब अर्जुन को युद्ध में विजय प्राप्त करने की इच्छा हुई, तो भगवान श्रीकृष्ण ने उसे यही सलाह दी, कि बिना दिव्य अस्त्रों के युद्ध में विजय प्राप्त करना असम्भव है; इसलिये यह जरूरी है, कि पहले तुम भगवान शिव और इन्द्र की आराधना करो, उनसे दैविक बल (अस्त्र) प्राप्त करो और ऐसा होने पर ही तुम जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकते हो।

और हम भी, जो जीवन के इस युद्ध में लड़ तो रहे हैं, परन्तु जिस प्रकार से विजय प्राप्त होनी चाहिए, उस प्रकार से विजय या सफलता नहीं मिल रही है, क्योंकि यह जीवन का युद्ध केवल हम अपने बाहुबल से ही लड़ रहे हैं, जबकि हमारे पास दैविक शक्ति होनी चाहिए।

यदि हम दैविक शक्ति को प्राप्त कर लेते हैं, तो निश्चय ही जीवन में सफलता पा लेना ज्यादा सरल, ज्यादा अनुकूल, ज्यादा सुविधाजनक हो जाता है और ऐसा करने पर ही सम्पूर्ण जीवन में जगमगाहट प्राप्त हो सकती है।

साधना में निर्दिष्ट विधि का पालन अनिवार्य

विविध शास्त्रों में यह स्पष्ट रूप से बताया गया है, कि साधना के लिये ज्यादा पढ़ा-लिखा होना आवश्यक नहीं है। उसके लिये यह भी जरूरी नहीं है, कि वह संस्कृत का भली प्रकार से उच्चारण करना जानता हो और न ही साधना के लिये किसी लम्बे-चौड़े विधि-विधान या पूजा-पाठ की ही आवश्यकता है।

साधना की पूर्ण सफलता के लिये यह जरूरी है, कि साधक निर्दिष्ट विधि का पालन करे तथा साथ ही मन में यह निश्चय कर ले, कि मुझे अपने जीवन के भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनो पक्षों को संवारना है, मुझे अपने जीवन में पूर्ण सफलता प्राप्त करनी है और मैं समाज में तथा देश में उन्नति के शिखर पर पहुंच कर पूर्णता प्राप्त करके ही रहूंगा।

जिस प्रकार से प्रयोग विधि बताई गई है, उस प्रकार से यदि वह प्रयोग सम्पन्न करता है, तो निश्चय ही उसे अनुकूलता प्राप्त होतीं है, उसे जीवन में सिद्धि प्राप्त होती है और वह अपने जीवन से दु:ख, दैन्य, बाधाओं और परेशानियों को दूर करने में सफल हो पाता है तथा जीवन में वह सब कुछ प्राप्त कर लेता है, जो उसके जीवन का लक्ष्य होता है, जो उसके जीवन का उद्देश्य होता है।

साधना सामग्री की अनिवार्यता

'देव्योपनिषद्' में स्पष्ट रूप से बताया गया है, कि साधना और सिद्धि के लिये व्यक्ति को साधना विधि की जरूरत होती है, साथ ही साथ

साधना सामग्री के बिना भी साधना में सफलता प्राप्त नहीं हो पाती।

जिस प्रकार बिना अच्छे किस्म के हथियारों के युद्ध में विजय प्राप्त नहीं की जा सकती, ठीक उसी प्रकार से श्रेष्ठ मंत्र सिद्ध, प्राण प्रतिष्ठा युक्त सामग्री के बिना साधना में भी सिद्धि प्राप्त नहीं की जा सकती। पूर्ण सफलता के लिये यह आवश्यक है, कि हम जो साधना सम्पन्न कर रहे हैं, वह प्रामाणिक हो और उसमें जो सामग्री प्रयुक्त हो, वह उत्तम कोटि की हो, सही हो, मंत्र सिद्ध हो और उस साधना के लिये अनुकूल हो। ऐसी सामग्री प्रयोग कर निश्चय ही साधक अपने जीवन में पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकता है।

साधना हेतु गुरु कृपा अनिवार्य

वेद, उपनिषद्, पुराण एवं सभी धर्मों व सम्प्रदायों का इस बात पर एक ही मत है, कि मानव जीवन का लक्ष्य गुरु कृपा द्वारा आत्म तथा भगवत् साक्षात्कार है। मनुष्य का जीवन आत्मिक है, यह बात वह भूल गया है। इस विस्मृत जीवन की पुनः प्राप्ति ही साधना का लक्ष्य है।

इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये साधक को अत्यधिक संघर्ष करना पड़ता है। श्रुतियों में इस संघर्ष को 'क्षुरस्य धारा' की संज्ञा प्राप्त है।

साधक जब तक अपने आत्म को गुरु से एकाकार नहीं कर देता, तब तक उसे निरन्तर एक के बाद एक कठोर परीक्षाओं से गुजरना पड़ता है, अत्यधिक दुःख व वेदना सहन करनी पड़ती है; किन्तु साधक के मन में जगी आध्यात्मिक पिपासा, अपने प्रभु की एक झलक देख लेने की कामना, प्रिय से एकाकार हो जाने की भावना, गुरु चरणों में समर्पित होने की चाहत एवं इष्ट, मंत्र व गुरु के प्रति पूर्ण श्रद्धा और विश्वास – ये ऐसे अस्त्र हैं, जो साधक के मार्ग में आने वाली समस्त विपत्तियों का नाश कर कार्य सुगम कर देते हैं।

साधना के पथ पर अविचलित हो चलते रहने का दृढ़ विचार बना कर आगे बढ़ें। दृढ़ साधक को ही गुरु कृपा प्राप्त होती है। अपने मन में सदैव यह भावना रखें, कि गुरु आपके साथ में हैं और आप देखेंगे, कि आपकी यह भावना आपके लिये कितनी अधिक फलीभूत होती है।

साधना में ध्यान व धारणा की आवश्यकता

कई बार साधक व शिष्य प्रायः यह कहते सुने जाते हैं – "क्या करूं, साधना करना तो चाहता हूं, किन्तु इतनी अधिक व्यस्तता है, कि समय ही नहीं मिल पाता।"

ऐसे व्यक्तियों के प्रश्न में ही उनका उत्तर भी छिपा हुआ है। स्पष्ट है, कि इस तरह की विवशता व्यक्त करने वाले शिष्य में 'धारणा शक्ति' का अत्यधिक अभाव है।

ऐसे व्यक्ति को चाहिए, कि वह अपने नित्य की जीवनचर्या का अवलोकन करे, तब उसको एहसास होगा, कि कुछ ऐसे कार्य उसके जीवन का अंग बन गए हैं, जिनका महत्त्व उसके लिये शून्यवत् भी नहीं है और वह अपने नित्य के जीवन के कुछ बहुमूल्य समय उन व्यर्थ के कार्यों में खोता जा रहा है।

समय का चक्र रुकता नहीं है, वह तो चलता ही जा रहा है और ईश्वर प्रदत्त अमूल्य उपहार यह मानव देह जितने समय के लिये प्राप्त हुआ है, उस समय में न्यूनता होती जा रही है। व्यर्थ में समय न बीते, इसके लिये आवश्यक है, कि व्यक्ति अपनी धारणा शक्ति को मजबूत बनाये और यह संकल्प धारण करे, कि वह अपने जीवन के क्षणों को आवश्यक कार्य हेतु ही प्रयुक्त करेगा, क्योंकि अच्छी धारणा शक्ति के अभाव में इष्ट का साक्षात्कार तो दूर, एक साधारण सा कार्य भी सम्पन्न नहीं हो सकता है।

धारणा शक्ति को दृढ़ बनाने के लिये यह आवश्यक है, कि 'त्राटक' का अभ्यास किया जाय। त्राटक के अभ्यास के लिये किसी विशेष यंत्र की आवश्यकता नहीं होती, इसके लिये तो आपको मात्र इतना ही करना है, कि एक लक्ष्य निर्धारित कर अपने मन की शक्तियों को उस पर केन्द्रित करें। प्रारम्भ में ऐसा होना कठिन है, किन्तु अभ्यास न छोड़ें, नियमित अभ्यास से आप धीरे-धीरे अपनी मानसिक किरणों को अपने इष्ट, अपने गुरुदेव की मूर्ति या चित्र पर एकाग्र करने में सफल हो जायेंगे और नित्य अभ्यास से आप अपने इष्ट का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त कर दीर्घकाल तक इस शक्ति की चेतना को बनाये रख सकेंगे।

ध्यान केन्द्रित करने की बात पर एक पौराणिक उद्धरण का उल्लेख करना उचित लग रहा है –

दक्षिण भारत के एक तमिल संत हुए हैं – 'तिरुवल्लूर'। एक बार इनसे इनकी पत्नी ने पूछा – "जब आप साधना में बैठते हैं, तो आपको जरा भी एहसास नहीं रहता, कि घर में क्या हो रहा है। यदि कोई मुसीबत आ जाय, तो मैं चीखती रह जाऊंगी और आप आंख बंद किये बैठे रहेंगे। मैं तो आपका यह सब क्रिया-कलाप समझ ही नहीं पाती।"

रोज-रोज की चिल्लाहट से परेशान तिरुवल्लूर ने निश्चय किया, कि पत्नी को इसका रहस्य बताना ही पड़ेगा, किन्तु वेदान्त के उदाहरण द्वारा यह समझ नहीं सकेगी, अतः कोई साधारण सा उपाय करना चाहिए, जिससे इसकी समझ में अच्छी तरह आ जाये।

एक दिन उस गांव में, जहां वे रहते थे, एक पारम्परिक उत्सव था। बहुत धूमधाम से यह पर्व मनाया जा रहा था। उसी दिन उन्होंने अपनी पत्नी को बुलाया और उसके हाथ में तेल से लबालब भरा एक दीपक पकड़ा दिया और कहा – "पूरे मेले में घूम कर आओ, तुम्हारे साथ मैं एक बधिक भेज रहा हूं, ध्यान रखना यदि एक बूंद तेल भी दीपक से बाहर गिरा, तो यह बधिक तुम्हारी गर्दन काट देगा।"

आगे-आगे तिरुवल्लूर की पत्नी हाथ में तेल से भरा दीपक लिये चल पड़ी और उसके पीछे नंगी तलवार लिये बधिक। संत की पत्नी का सारा ध्यान, प्राण, सारी बुद्धि, विवेक और सम्पूर्ण चेतना इसी बात पर केन्द्रित हो गई, कि तेल की बूंद न छलके; यदि एक भी बूंद छलकी, तो आज मैं मारी जाऊंगी।

पूरे मेले में घूम कर तेल की एक भी बूंद गिराये बगैर घर पहुंची और अत्यधिक दर्प के साथ अपने पति से बोली – "लो मैं आ गई, एक भी बूंद नहीं गिरी है, स्वयं देख लो।"

तिरुवल्लूर ने पूछा – "मेले में कितने प्रकार के खेल हो रहे थे, तुमने देखा?"

– "नहीं।"

— "वहां तो विविध प्रकार के वाद्य यंत्र बज रहे थे, तुमने सुना?"

— "नहीं।"

— "क्यों? तुम्हारा मन कहां था? तुम तो पूरे मेले में घूम कर आ रही हो!"

संत की पत्नी ने कहा — "मेरा मन तो दीपक के तेल पर केन्द्रित था, सिर्फ एक ही विचार मन में था, कि एक भी बूंद न छलके। इसके अतिरिक्त मेरे आस-पास क्या हो रहा था, इसका मुझे तनिक भी एहसास न हो सका।"

— "अब स्वयं निर्णय कर लो, सरस्वती! तेल पर केन्द्रित तुम्हारा मन ध्यान की उस अवस्था में पहुंच गया था, जहां अपने लक्ष्य के अतिरिक्त अन्य किसी बात की सुधि नहीं रह जाती है। ऐसा तुमने इसलिये किया, क्योंकि तुम्हारे पीछे बराबर एक बधिक नंगी तलवार लिये चल रहा था और तुम्हें भय था, कि तेल की बूंद गिरते ही मैं मरी।"

"ठीक इसी प्रकार मनुष्य के जीवन का संहारकर्त्ता देव उसके पीछे काल रूपी नंगी तलवार लिये हर पल चलता रहता है। जो बुद्धिमान मनुष्य होते हैं, वे गुरु की शरण में जाते हैं और उनके द्वारा साधना रूपी कवच को प्राप्त कर लेते हैं। साधना रूपी कवच ही वह दीपक है, जिसमें ज्ञान का तेल लबालब भरा है और साधक को उस पर ध्यान केन्द्रित कर उस तेल की बूंद को गिरने से बचाना है।"

"अब तुम समझ गई होगी, कि जब मैं ध्यान में बैठता हूं, तो क्यों नहीं मुझे तुम्हारी आवाज सुनायी पड़ती है। जब तुम ठीक इसी प्रकार अपना ध्यान अपने इष्ट की ओर लगाओगी, तभी तुम अपने इष्ट का दर्शन प्राप्त कर उसमें लीन हो सकोगी। फिर काल तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता है।"

तिरुवल्लूर का उदाहरण देने के पीछे सिर्फ यही उद्देश्य है, कि आप अपने आपको अज्ञान के फन्दे से मुक्त कर लें और गुरु रूपी सूर्य की ज्ञान रश्मियों से अपने जीवन का मार्ग प्रशस्त करें। नित्य प्रति के अभ्यास से काम ज्वर समाप्त हो जायेगा, लोभ, मोह रूपी व्याधियां सदैव के लिये समाप्त हो जायेंगी। ज्यादा नहीं, सिर्फ पांच मिनट नित्य स्नान के बाद समय निकाल कर

अपने गुरु के चित्र को देखें, फिर आंख बंद कर उस बिम्ब को, गुरु के दिव्य स्वरूप को अपने सामने लाने का प्रयत्न करें। इस प्रयास के द्वारा आप एहसास करेंगे, कि ज्ञान का शीतल समीर आपको स्पर्श कर रहा है और आप अत्यधिक उमंग व स्फूर्ति से आप्लावित हो रहे हैं।

परमात्मा में अपनी आत्मा को लीन कर देना ही ध्यान की परमावस्था है। ध्यान करते समय कई प्रकार के दृश्य आते और जाते रहते हैं, ये आध्यात्मिक उन्नति के लक्षण हैं; किन्तु मात्र इतने को ही पूर्णता मान कर गौरवान्वित मत होइये, क्योंकि आपका लक्ष्य तो अपने इष्ट के चरणों से एकाकार होना है।

साधना में योग की आवश्यकता

वर्तमान युग में प्रदूषण का इतना अधिक बोलबाला हो गया है, कि सामान्य जीवन व्यतीत करना कठिन है। चारों तरफ नगर में प्रदूषण फैलाते कल-कारखाने, वाहनों का शोर, गरिष्ठ भोजन, क्लबों की सदस्यता, जहां जा कर मानसिक शांति प्राप्त करने का भ्रम युक्त प्रयास – इन सबके चक्कर में पड़ कर मनुष्य अपनी शक्ति का निरन्तर ह्रास करता जाता है, जिसके कारण उसके स्नायु निरन्तर तनावग्रस्त बने रहते हैं।

वर्तमान युग का व्यक्ति तनावग्रस्त जीवन जीने के लिये बाध्य सा हो गया है।

भौतिकता की अंधी भाग-दौड़ में वह विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का संग्रह कर उनमें सुख ढूंढ़ने का प्रयास करता है, किन्तु क्या आज तक कोई भी व्यक्ति ऐसी वस्तु प्राप्त कर सका है, जिसे वह मधुर, सुखमय, आनन्दप्रद व संतोषप्रद कह सके?

बहुत ही आकर्षक है संसार का यह मायावी बाजार, चक्रव्यूह बना कर फंसा रखा है सभी मनुष्यों को अपने अन्दर . . . और जो इसमें एक बार फंस गया, वह फिर बाहर आ ही नहीं सकता, निरन्तर अधिक से अधिक फंसता ही जाता है।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, वासना आदि का राक्षस अपने आयुधों से आपको आहत करता रहता है और आप उसके प्रहारों को झेलते रहते हैं और प्रसन्न दिखने का स्वांग रचते रहते हैं।

➢ क्या कभी आपने एक पल भी इस चक्रव्यूह से बाहर निकलने का, रास्ता ढूंढ़ने का प्रयास किया है?

➢ क्या आपने अपनी सुरक्षा के लिये किसी कवच को प्राप्त करने का प्रयास किया है?

– नहीं, तो आप अपने जीवन क्रम को देखिये . . . जिसे आप अत्यधिक प्यार करते थे, वह आपको छोड़ कर चला गया, फिर भी आप सचेत नहीं हो रहे हैं।

आपका उत्तर होगा – "मैं सब समझता हूं, सचेत होता हूं, किन्तु कुछ न कुछ ऐसी बाधा आ जाती है, कि फिर पूर्ववत् स्थिति बन जाती है। इस संसार में अच्छी तरह रहने के लिये आवश्यक है, कि घर हो, रोटी हो, पत्नी हो, बच्चे हों। यदि यह सब कुछ नहीं है, तो व्यर्थ है जीवन।"

– यह सब कुछ व्यक्ति के मन का भ्रम है। अरे! जगत नियन्ता ने तो यह मानव शरीर का वरदान इसलिये प्रदान किया है, कि सांसारिक क्रिया-कलापों को करते हुए, अपने शरीर को सुख पहुंचाते हुए अपनी आत्मा के सुख के लिये भी सोचो।

क्या कभी आपने सोचा है, कि आपके इस शरीर में से, जिसे आप मंहगे से मंहगे साबुन से मल-मल कर साफ करते हैं, सुगन्धित इत्र छिड़क कर सुवासित करते हैं, विभिन्न प्रकार के वस्त्रों से सुसज्जित करते हैं, जिसके पालन के लिये अच्छा से अच्छा भोजन करते हैं . . . उसी शरीर में से आत्मा नामक पंछी उड़ जाये, तो आप क्या करेंगे? यह शरीर जिसके आधार पर चलायमान है, उसकी तरफ ही ध्यान नहीं दे रहे हैं!

यह ठीक है, कि शरीर का निरोगी होना आवश्यक है, शक्ति युक्त होना आवश्यक है, किन्तु इसके साथ ही साथ इसमें आत्मा का निवास करना भी अत्यधिक आवश्यक है। शरीर का ध्यान रखते हुए आत्मा का ध्यान रखना भी आवश्यक है, शरीर के पोषण के साथ ही साथ आत्मा का भी पोषण होना आवश्यक है।

एक दिन और एक रात मिला कर चौबीस घंटे का पूरा समय अपने शरीर के प्रति आप व्यतीत करते हैं। इन चौबीस घंटों में ज्यादा नहीं, मात्र एक

घंटा या इतना भी नहीं, तो मात्र तीस मिनट पूरी तरह से अपनी आत्मा के पोषण के प्रति व्यतीत करें, फिर देखिये, आप पहले से अधिक सौन्दर्य युक्त, विवेक युक्त बन जायेंगे।

अब आप सोचेंगे – "चलो! दे दिया तीस मिनट।"

... लेकिन इस तीस मिनट को कैसे प्रयोग करें ? यह भी सोचिये।

– इसके लिये आपको आवश्यकता पड़ती है सद्‌गुरु के संरक्षण में जा कर उनसे साधना का ज्ञान प्राप्त करने की, क्योंकि साधना ही वह विधि है, जिससे आत्मा पुष्ट होती है। साधना करने का आपने निश्चय जिस दिन से कर लिया, उसी दिन से आपकी आत्मा की उद्‌बुद्धता प्रारम्भ हो जाती है।

इसके पूर्व मैंने आपको बताया, कि धारणा शक्ति को दृढ़ करें। किस प्रकार करेंगे, इसे भी बताया। अब विषय है साधना की अगली क्रिया –'योग'।

योग का भी साधना में अत्यधिक महत्त्व है। इसके माध्यम से प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करने की शक्ति में स्थिरता प्राप्त होती है। साधना में आने वाले व्यवधान को दूर करने के लिये आवश्यक है, कि आपके दिमाग तथा हृदय में विचार, कर्म तथा भावना में 'संतुलन' बना रहे।

योगश्चित्तवृत्ति निरोधः।

चित्त की चञ्चल वृत्तियों का निरोध करना ही योग कहलाता है।

सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।

सफलता प्राप्त कर अत्यधिक खुशी से उछल न पड़ना और असफलता मिलने पर विषाद युक्त नहीं होना – इन दोनों ही विपरीत अवस्थाओं में मन को संतुलित रखना ही योग है।

तस्माद्योगाय युज्यस्व, योगः कर्मसु कौशलम्।

आपके जीवन के लिये जो कर्म निर्धारित हैं, उन्हें दक्षता पूर्वक सम्पन्न करना ही 'योग' है, इसी योगाभ्यास में जुटे रहना चाहिए ।

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्।

इस प्रकार जब मन और इन्द्रियां संयमित हो जाती हैं, तब आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप में विश्राम करती है ।

साधना में मन की भूमिका

मानव, मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाले समस्त संकल्प- विकल्प, सुख-दु:ख की अनुभूति का आभास तथा धारणा का स्रष्टा 'मन' है, अत: मन की वृत्तियों को जानना अत्यधिक आवश्यक है। यह जानना आवश्यक है, कि मन बारम्बार किस विषय पर चिन्तन किया करता है।

मन की गति को जानने के लिये ध्यान से बढ़कर अन्य उपाय नहीं है। किसी एकान्त स्थान पर बैठ कर अपना ध्यान अपने मस्तिष्क में उठने वाले विचारों पर केन्द्रित करें। मन के बाह्य धरातल पर उठने वाले अनेक छोटे उद्वेग तथा व्यर्थ वृत्तियों का आभास होगा। यही उद्वेग व वृत्तियां साधक का ध्यान एकाग्र नहीं होने देती हैं। इन उंद्वेगों और वृत्तियों को बल पूर्वक अपने इष्ट, अपने गुरुदेव अथवा गुरुदेव द्वारा दिए गए मंत्र पर केन्द्रित कर स्थिर करने का प्रयास करें . . . कठिन संग्राम करना पड़ेगा, किन्तु आप अपने प्रयास में सफल होंगे।

जब मन शांत हो जाएगा, तो स्वत: ही वह भावी लक्ष्य के प्रति एकाग्र हो जाएगा . . . और उस समय आने वाले विचार आत्मा के वे विचार होते हैं, जो साधक को परमात्मा की, अपने लक्ष्य की निकटता प्रदान करने में सहायक होतें हैं।

मन को नियन्त्रित करने के लिये आवश्यक है, कि अपना दृष्टिकोण बदल डालें, मन स्वत: अपने अन्दर छिपे गुप्त विचारों को सामने ले आयेगा। इन विचारों में से शुभ विचार ग्रहण कर, दुर्विचारों को नष्ट कर डालें। ऐसा करने से आपका (साधक का) चिन्तन शनै:-शनै: शुभ्र बनेगा, जिससे आत्म ज्योति अधिकाधिक स्थिर होकर प्रज्ज्वलित रह सकेगी।

आत्म ज्योति के प्रज्ज्वलित होने से स्वत: ही विचार में शुद्धता, कर्म में पवित्रता, सर्वजन के प्रति प्रेम का विकास, अपने ईंष्ट के स्मरण मात्र से अश्रुपात, रोमांच, नम्रता, सच्चाई का आविर्भाव होनें लगता है — और यही आध्यात्मिक उन्नति के लक्षण हैं, सफलता के सूत्र हैं। इस प्रकार से दिव्य जीवन-यापन करने वाला ही सायुज्यता को प्राप्त हो पाता है।

साधना में प्रेम की आवश्यकता

'प्रेम' शब्द इतना गूढ़ार्थ युक्त है, कि इसकी जितनी विवेचना की जाय, उतना ही कम है। प्रेम ही वह माध्यम है, जिसके द्वारा खतरनाक पशुओं को भी मनुष्य अपने वशवर्ती बना लेता है और अपने इशारे पर चलाने लगता है।

असम्भव कार्य भी प्रेम की भावना से सम्भव हो जाते हैं। जब बच्चा जन्म लेता है, तो मां से गहन सम्बन्ध स्थापित करने का माध्यम प्रेम ही होता है। पति और पत्नी के बीच जो जुड़ने की कड़ी है, वह प्रेम ही है। इस संसार के प्रत्येक रिश्ते को निभाने में प्रेम की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

प्रेम तो किसी से भी किया जा सकता है, एक जानवर से या फिर एक मनुष्य से। इसके आगे बढ़कर भगवान से, इष्ट से और गुरु से भी प्रेम किया जाता है और सही अर्थों में देखा जाय, तो इनसे किया गया प्रेम ही वास्तविक प्रेम होता है।

साधक कितना ही मंत्र जप करे, कितना भी पूजा पाठ करे, किन्तु यदि उसके मन में अपने इष्ट के प्रति, अपने गुरु के प्रति प्रेम की भावना नहीं है, तो उसका जप-तप, व्रत-उपवास सब व्यर्थ हो जाता है।

जब साधक का मन, हृदय, प्राण, प्रेम की भावना से अनुप्राणित हो जाता है, तो उसे अपने मार्ग में आने वाली बाधाएं और परेशानियां कांटों के समान कष्टप्रद न हो कर, फूल के समान सुखप्रदायक बन जाती हैं।

इस प्रकार साधना में प्रेम की भावना का होना अत्यधिक आवश्यक है, क्योंकि प्रेम की भावना उत्पन्न हो जाने पर अपने इष्ट पर से विश्वास विचलित नहीं हो पाता है।

प्रेम का पथ अपना कर ही सूर, तुलसी, मीरा, रैदास, चैतन्य महाप्रभु आदि अन्यतम साधक बन सके। श्री रामकृष्ण परमहंस ने भी तो प्रेम मार्ग का ही अनुसरण किया और अपने इष्ट काली के दर्शन प्राप्त कर उनसे एकीकृत हो सके। स्पष्ट है, कि प्रेम सूत्र बहुत उपयोगी है प्रत्येक साधक के लिये।

साधना में आध्यात्मिक नियति

मनुष्य जब जन्म लेता है, तो मात्र वह एक मानव शरीर धारण कर ही संसार में पदार्पण नहीं करता है, अपितु उसके साथ उस व्यक्ति के पूर्व जन्मकृत संस्कार भी रहते हैं। कोई भी मनुष्य अपने पूर्व जन्म के विचार, स्मृति और आदतों से मुक्त नहीं हो पाता है, व्यक्ति के पूर्व जन्मकृत स्मृतियों और आदतों के कारण ही इस जन्म की कामनाएं होती हैं। यह पुरातन सत्य है, कि कोई भी व्यक्ति निष्काम जन्म नहीं लेता है। हां! यह अवश्य है, कि वह निष्काम बनने का प्रयास करता रहता है। किसी भी मनुष्य की इच्छा उसके पूर्व जन्म में आत्मा के अस्तित्व को ही प्रमाणित करती है।

व्यक्ति की भावना के द्वारा ही आध्यात्मिक नियति का निर्णय होता है। यदि कोई व्यक्ति साधक रहा है अपने पूर्वजन्म में, तो वह इस जन्म में भी साधक बनता ही है; उसे समाज की मुश्किलें या बंधन रोक ही नहीं सकते। जब तक मनुष्य की यह इच्छा पूर्ण नहीं हो जाती, तब तक उसकी नियति उसे उस मार्ग पर खींच-खींच कर लाती ही रहेगी।

इस प्रकार स्पष्ट है, कि साधना सम्पन्न करना और सद्गुरु का प्राप्त होना, इसमें भी आध्यात्मिक नियति का ही हाथ होता है। इसीलिये हमारे पूर्वज कह गये हैं, कि इस जन्म में भगवान का नाम लो, जिससे अगला जन्म सुधर जाए।

उपरोक्त विवेचित सूत्रों के साथ ही निम्न सूत्रों को भी अपनाना श्रेयस्कर होगा -

- सभी परिस्थितियों में शान्त रहें तथा समत्व बुद्धि रखें।
- साधना के क्षेत्र में साधक का कितना भी क्षीण प्रयास क्यों न हो, उसकी आन्तरिक शक्ति का विकास होता ही है। अतः प्रयासरत बने रहें।
- पूर्ण आत्मार्पण भाव से अपने गुरु के पास जायें, सूक्ष्म कामना को भी बचा कर न रखें। ऐसा करने से आपको पूर्ण गुरु कृपा प्राप्त होगी।

- मंत्र जप के समय आसन पर स्थिर रहें और निरन्तर आपको ईश्वरीय शक्ति प्राप्त हो रही है, ऐसा आभास करें।
- साधना के समय होने वाले अनुभव, यथा ज्योति दिखना, नाद श्रवण होना, दिव्य गन्ध अनुभव होना को ही पूर्णता न मान लें। वे सभी तो इस बात की पुष्टि करते हैं, कि आप सही मार्ग पर चल रहे हैं।
- प्रभु इच्छा के बिना प्रबल झंझावात एक सूखे पत्ते को नहीं उड़ा सकता, अतः सफलता, असफलता की भावना ईश्वर पर छोड़ दें।
- मंत्र के प्रति पूर्ण निष्ठा का भाव रखें, किसी भी प्रकार की परेशानी होने पर गुरु मंत्र का जप करें, शांति प्राप्त होगी।
- मन से वासनाओं का नाश कर डालें, क्योंकि मन में वासनाओं की कामना बनाए रखना सर्प को दूध पिलाने के समान है।
- साधना में यदि असफलता प्राप्त होती जा रही है, तब भी निराश होकर साधना का त्याग न करें; पहले की अपेक्षा और अधिक दृढ़ चित्त हो साधना में संलग्न हो जायें, सफलता अवश्य प्राप्त होगी।
- सांसारिक सम्बन्धों के प्रति कर्तव्य पालन करें, किन्तु आसक्ति की भावना मत रखें।
- विश्वात्मैक्य की भावना से अपने हृदय को अनुप्राणित करें। साधना के द्वारा आप सिर्फ अपना ही नहीं अपने परिवार, समाज, देश तथा पूरे विश्व का कल्याण करते हैं।

पुस्तक के इस प्रभाग में वर्णित सूत्रों को अपना कर और इनके अनुसार चलने पर आप किसी भी साधना में पूर्णतः सफलता प्राप्त कर लेंगे।

मानव जीवन में साधना का महत्व

जल में कुम्भ, कुम्भ में जल है

— क्या सांस लेना आवश्यक है?

— क्या जीवित रहना आवश्यक है?

अगर ये सब आवश्यक हैं, तो साधना भी आवश्यक है। साधना में सिद्धि के लिए दो तत्त्वों की नितान्त अनिवार्यता है — गुरु के प्राणों से एक रस होने की क्रिया और इष्ट से पूर्ण साक्षात्कार की क्रिया।

— और इनके लिए माध्यम हैं माला, यंत्र, चित्र, साधना सामग्री, जो मंत्र सिद्ध हो, प्राणश्चेतना युक्त हो, इष्ट और साधक के बीच सेतु हो।

— हमारी आंख को जो दिखाई देता है, वह तो प्रतिबिम्ब है।

— ये उपकरण भी गुरु के प्राण तत्त्व और इष्ट के प्रतिबिम्ब होते हैं।
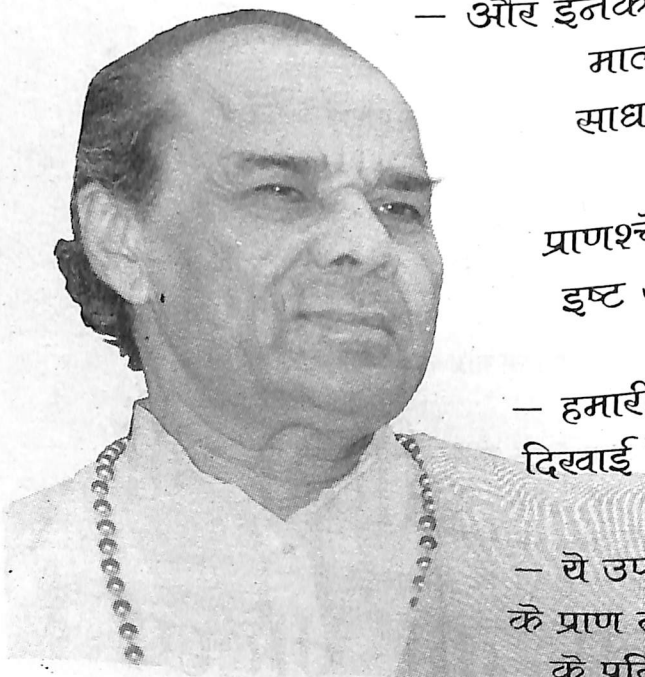
का महत्त्व मानव जीवन में प्रतिपादित करने का प्रयास लगभग सभी अध्यात्म वेत्ताओं ने किया है, परन्तु इसके महत्त्व का ठीक से प्रतिपादन नहीं हो पाया, क्योंकि साधना के महत्त्व का क्षेत्र मानव जीवन में इतना अधिक विस्तृत है, कि उसे कुछ पन्नों पर, कुछ शब्दों के माध्यम से समेटना कठिन है।

साधना के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए यदि हम यह कहें, कि साधना ही वह क्रिया है, जिसके माध्यम से मनुष्य जीवन को सुव्यस्थित ढंग से संचालित किया जा सकता है, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

मानव शरीर शिव-शक्ति सायुज्य का प्रतिफल है, इन्हीं के माध्यम से मनुष्य के शरीर की सारी गतिविधियां नियन्त्रित होती हैं। प्रत्येक मानव शरीर में, जब तक उसने साधना को अपने जीवन में नहीं अपनाया है, शिव तत्त्व और शक्ति तत्त्व विद्यमान तो दोनों ही होते हैं, किन्तु साधना के अभाव में शिव तत्त्व सुप्तावस्था में होता है और शक्ति तत्त्व जाग्रतावस्था में।

शक्ति तत्त्व के जाग्रतावस्था में होने के कारण ही मनुष्य संसार में कर्म करता है, किन्तु कभी-कभी सुप्त शिव तत्त्व के कारण शक्ति तत्त्व उचित दिशा निर्देश नहीं प्राप्त कर पाता है, जो व्यक्ति को दुष्कर्मों की ओर प्रेरित करने लगती है, जिसके परिणाम स्वरूप मानव दुराचारी बन जाता है।

इस दुष्कर्म से बचने के लिये आवश्यक है, कि मनुष्य अपने अन्दर सुप्तावस्था में पड़े शिव तत्त्व को जाग्रत करे।

. . . और यह जागरण क्रिया 'साधना' के माध्यम से ही सम्भव है।

जब कोई व्यक्ति साधना सम्पन्न करता है . . . यहां एक बात स्पष्ट करना अत्यधिक आवश्यक है, कि साधना किसी योग्य गुरु के निर्देशन में ही सम्पन्न करना चाहिए, क्योंकि यदि गुरु ही अज्ञानी होगा, उसे ही साधना किस प्रकार करें, इस बात का बोध नहीं होगा, तो वह किसी अन्य के शिव तत्त्व को क्या जाग्रत करेगा, जबकि उसके अन्दर स्वयं का शिवतत्त्व सुप्तावस्था में ही पड़ा हुआ है . . . मैं पुनः अपनी प्रारम्भिक बात पर आता हूं, कि जब व्यक्ति योग्य गुरु के निर्देशानुसार साधना प्रारम्भ करता है, तो उसके द्वारा सम्पन्न की जा रही साधना और गुरु के आशीर्वाद से शिव तत्त्व का धीरे-धीरे जागरण स्वतः आरम्भ होता है।

इस शिव एवं शक्ति साधना को ही विद्वानों ने 'कुण्डलिनी' नाम से सम्बोधित किया है। जब शिव तत्त्व जाग्रत होता है, तो स्वतः ही मनुष्य के अन्दर सत्प्रवृत्तियों का स्फुरण आरम्भ हो जाता है और उसके अन्दर निहित शक्ति तत्त्व पर नियन्त्रण भी।

इस प्रकार शिव तत्त्व और शक्ति तत्त्व जब दोनों ही जाग्रतावस्था में होते हैं, तब वह व्यक्ति, वह साधक जो भी साधना सम्पन्न करना चाहता है, वह कर ही लेता है, उसकी इच्छा शक्ति अत्यधिक दृढ़ हो उठती है। यदि वह सोच ले, कि मुझे अपने सामने लक्ष्मी को नृत्य कराना है और अपनी इच्छानुसार उससे धन-ऐश्वर्य प्राप्त करना है, तो वह कर ही लेता है।

आप स्वयं अनुमान लगा सकते हैं, कि साधना का कितना अधिक महत्त्व मानव जीवन में है। यदि देवी-देवताओं को अधीन कर उनसे कार्य लेना सम्भव हो जाता है, तो फिर दैनिक जीवन और भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति तो बहुत ही सरलता से हो सकती है।

5

क्या साधना में सफलता मिलती ही है?

मैं तो तेरे पास में . . .

अनन्त देवी-देवता हैं,
अनन्त उपासना पद्धति है,
कहां कहां जाकर सिर झुकाओगे,
किन किन दरवाजों पर जाकर नाक रगड़ोगे,
जीवन के दिन तो थोड़े से ही हैं, गिनती के हैं।
वे तो ऐसे ही समाप्त हो जायेंगे, फिर क्या मिलेगा?
जीवन यूं ही भटकते
हुए मन्दिरों में,
तीर्थों में,
साधु-संन्यासियों
के पास समाप्त
हो जायेगा।
यदि तुम्हें
सद्गुरु
मिल गये हैं
तो सब कुछ
छोड़कर
उनके चरण क्यों
नहीं पकड़ लेते?
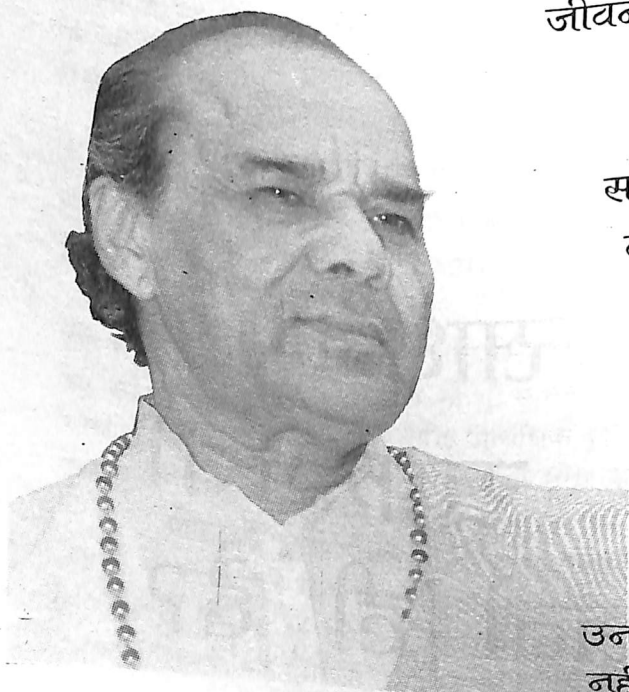
क्या मै कर सकता हूं?
क्या मैं कर सकती हूं?

— यह विचार प्रत्येक स्त्री-पुरुष के मन में उत्पन्न होता ही है, इसके साथ ही उसके मन में यह भी भावना आती है, कि अभी मेरी उम्र ही क्या है, जब थोड़ी उम्र अधिक हो जाये, सारे पारिवारिक दायित्व पूर्ण हो जायें, तब साधना कर लेंगे।

ऐसा सोचने वाले व्यक्ति एक बहुत बड़े भ्रम जाल में अज्ञानतावश फंसे हुए हैं। उन्हें इस भ्रमजाल से बाहर आना चाहिए तथा अपने जीवन और इसके क्रिया-कलापों का सूक्ष्मता से अध्ययन करना चाहिए। तब उन्हें पता चलेगा, कि साधना किसी विशेष उम्र को प्राप्त कर ही नहीं की जा सकती है।

साधना करने के लिये न तो उम्र बाधक होती है और न ही स्त्री या पुरुष का होना। साधना करने के लिये तो आवश्यक है, कि व्यक्ति के अन्दर दृढ़ इच्छाशक्ति हो।

मेरे विचारानुसार तो साधना प्रत्येक मनुष्य को करनी ही चाहिए, क्योंकि साधना ही वह क्रिया है, जिसके द्वारा जीवन सुचारु रूप से संचालित हो सकता है, ऐसा मैं पहले भी बता चुका हूं। ईश्वर ने बहुत ही सोच-समझ कर मानव शरीर का निर्माण किया है और इसके अन्दर समस्त शक्तियां व सम्भावनाएं भर दी हैं।

एक शिशु, जब उसका आगमन मां के गर्भ में होता है, उस समय भी वह मात्र एक मांस-पिण्ड न हो कर इस ब्रह्माण्ड का सर्वशक्ति व सर्वज्ञान सम्पन्न प्राणी होता है, उसके अन्दर भी सब कुछ विद्यमान होता है। मां के गर्भ में शिशु यों ही नहीं पड़ा रहता है, वहां भी वह साधना युक्त रहता है और उस समय उसके गुरु होते हैं – 'प्रकृति' और उसकी 'मां'।

आप किसी गर्भस्थ शिशु के चित्र को ध्यान से देखिये, तो आपको स्पष्ट दिखाई देगा, कि वह अपनी समस्त इन्द्रियों को एकाग्र कर ध्यान कर रहा है। उस समय यदि योग्य गुरु के द्वारा उसे दीक्षा प्रदान करायी जाय और विशेष क्रिया द्वारा ज्ञान प्रदान किया जाय, तो निश्चय ही वह उसे ग्रहण करता है। यह तो सभी जानते हैं, कि जब कोई स्त्री गर्भवती होती है, तो उसे अच्छे से अच्छा वातावरण प्रदान करने का प्रयास किया जाता है।

आपने महाभारत में पढ़ा होगा, अत्यधिक प्रसिद्ध है यह प्रसंग, कि अभिमन्यु ने गर्भ में ही चक्रव्यूह भेदन की क्रिया का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। यह तथ्य उस समय जितना सार्थक था, आज भी उतना ही सत्य है। शिशु जब तक मां के गर्भ में रहता है, तब तक वह मां के विचारों को पूर्णतः आत्मसात करता है और आंशिक रूप से आसपास रह रहे व्यक्तियों के विचारों को भी ग्रहण करता है।

इस प्रकार यह तो स्पष्ट है, कि शिशु जो गर्भ में है, वह भी एक पूर्ण चैतन्य प्राणी है, तो क्यों ने हम प्रारम्भ गर्भावस्था से ही करा दें। हां! इतना अवश्य है, कि उस शिशु को साधना की ओर प्रेरित करने के लिये उसकी मां और पिता को ही प्रयास करना होगा। गर्भवती स्त्री को और उसके परिवार के लोगों को चाहिए, कि उसे किसी योग्य गुरु के पास ले जायें और दीक्षा प्रदान करायें। साथ ही वे अपने शिशु को जिस क्षेत्र में आगे बढ़ाना चाहते हैं, उससे सम्बन्धित साधना प्राप्त कर सम्पन्न करें।

यदि आप चाहते हैं, कि आपका शिशु बड़ा हो कर डॉक्टर बने या बड़ा ऑफिसर बने, तो यह तभी सम्भव हो सकता है, जब आपका शिशु कुशाग्र बुद्धि का हो . . . और बुद्धि की प्रदाता देवी हैं 'सरस्वती'।

अत: गर्भवती मां को सरस्वती साधना सम्पन्न करनी चाहिए। यदि आप शिशु को बहुत बड़ा व्यापारी बनाना चाहते हैं, तो लक्ष्मी या कुबेर की साधना सम्पन्न कर सकते हैं।

आप प्रश्न पूछ सकते हैं, कि यह बात तो गर्भस्थ शिशु के लिये हैं, परन्तु जो पैदा हो चुके हैं, किशोर हैं, नवयौवन युक्त हैं, वयस्क हो गए हैं या आधी उम्र पार कर वृद्धावस्था प्राप्त कर रहे हैं, उनके लिये आप क्या सोचते हैं?

— क्या उनके लिये भी साधना इतनी ही उपयोगी है?

— क्या उनके लिये भी ऐसी कोई साधना है, जिनको वे अपना सकें?

— क्या प्रत्येक जाति और धर्म या सम्प्रदाय का व्यक्ति किसी भी साधना को सम्पन्न कर सकता है?

आपका यह प्रश्न पूछना सर्वथा उचित है, मैं आपके सामने अब इसी तथ्य को स्पष्ट कर रहा हूं। इसके पहले आपका 'माइण्ड क्लीयर' कर दूं, कि साधना सिर्फ आध्यात्मिक विचार के लोग या किसी जाति या धर्म विशेष से सम्बन्धित व्यक्ति ही कर सकता है — ऐसा नहीं है; अपितु साधना तो एक ऐसी पद्धति है, जिसे किसी भी व्यक्ति को अपनाने में जरा भी संकोच नहीं करना चाहिए।

यह कोई अनिवार्य नहीं है, कि आप पूर्ण आध्यात्मिकता को अपना कर ही इसमें सफलता प्राप्त कर सकते हैं। यदि आप आधुनिकता पसन्द व्यक्ति हैं, यदि आप प्रत्येक बात को, विचार को, विज्ञान की कसौटी पर कस कर, परख लेने के बाद ही अपनाना चाहते हैं, तो आपका यह स्वभाव साधना के क्षेत्र में अत्यधिक उपयोगी सिद्ध होगा, क्योंकि आपकी इच्छाशक्ति में दृढ़ता है और बिना दृढ़ इच्छाशक्ति के तो आप एक गिलास पानी भी ले कर नहीं पी सकते हैं।

ऐसा मैं इसलिये कह रहा हूं, कि यदि आप बीमारी से अशक्त हों, एक कमरे में लेटे हुए हों और आपका प्यास के कारण गला सूख रहा हो, आपके आसपास कोई व्यक्ति नहीं हो और पानी पीना आपके लिये

अत्यधिक आवश्यक हो गया हो, आपको लग रहा हो, कि यदि पानी नहीं मिला, तो प्राणान्त हो जायेगा। ऐसी स्थिति में आप किसी भी प्रकार से या तो पानी का गिलास उठा कर पानी पीने का प्रयास करेंगे या फिर कॉलबेल बजा कर किसी को बुला लेंगे और पानी पीने में सफल हो जायेंगे।

आपने सोचा, कि यह कैसे सम्भव हुआ?

ऐसा इसलिये हुआ, क्योंकि आपकी दृढ़ इच्छा थी, कि मुझे हर हालत में पानी पीना ही है। अपनी बात को और अधिक स्पष्ट करने के लिये एक-दो उदाहरण और बताता हूं –

कुछ समय पहले मेरे पास एक लड़की आयी और उसने मुझसे कहा – "मैं एक अच्छी नर्तकी बनना चाहती हूं, यदि मैं ऐसा नहीं कर सकी, तो मेरा जीवन व्यर्थ हो जायेगा।"

मैंने उससे कहा – "तो तुम्हें किसी अच्छे नृत्य शिक्षक के पास जा कर पूरी तन्मयता से नृत्य सीखना चाहिए।"

लड़की बोली – "गुरुजी! मुझे किसी अच्छे नृत्य शिक्षक की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि मेरे पिता खुद बहुत अच्छे नर्तक हैं"

ऐसा कह कर वह लड़की बिलकुल उदास सी चुप हो गई, उसकी आंखों में से आंसू छलक पड़े।

मैं सोच में पड़ गया – इसके परिवार की तरफ से कोई बंधन हो नहीं सकता, तो फिर ऐसी क्या बात हो सकती है, जिसके कारण यह इतनी निराश हो कर मेरे पास आई है . . . देखने में भी ठीक-ठाक है, नयन-नक्श, रूप-रंग सभी कुछ ठीक-ठाक है। उम्र भी सोलह या अठारह की ही होगी . . . फिर क्या कारण हो सकता है?

मुझे विचार मग्न देख कर वह चुप न रह सकी और बोली – "मैं समझ रही हूं, कि आप क्या सोच रहे हैं? आप यही सोच रहे हैं, कि रूप-रंग से अच्छी-भली है, परिवार की तरफ से भी कोई परेशानी नहीं है, फिर मेरे सामने क्या मुश्किल होगी? ऐसा है गुरुजी! कि मैं अपनी बड़ी बहन की तरह ही सामान्य लड़की थी और बचपन से ही नृत्य भी सीख रही थी, किन्तु मेरा दुर्भाग्य मेरे सामने आ गया, जब मैं बम्बई से

पूना जा रही थी; जिस कार से मैं जा रही थी, उसका एक्सीडेंट हो गया और मेरा एक पांव बुरी तरह जख्मी हो गया। मुझे अस्पताल में एडमिट किया गया . . . और मुझे होश तब आया, जब ऑपरेशन थियेटर से बाहर लाया गया . . . और अगले दिन मुझे पता चला, कि मेरा दाहिना पांव मेरे जीवन को बचाने के लिये घुटने के पास से काट दिया गया है।''

''मैं बुरी तरह रो पड़ी। सच गुरुदेव! मेरी तो जीने की इच्छा ही समाप्त हो चुकी थी . . . किन्तु आपके द्वारा लिखे ग्रंथ और पुस्तकें पढ़ने के बाद न जाने क्यों यह भाव आया, कि हो सकता है मेरी इच्छा आपके पास पूरी हो जाये। अभी कुछ ही दिन हुआ है, मैंने कृत्रिम पैर लगवाया है . . . मुझे निराश मत लौटाइयेगा . . . कुछ न कुछ अवश्य करिये।''

उसकी दर्द भरी दास्तान और कातर प्रार्थना सुन कर मन में उसकी इच्छा पूर्ण करने का ख्याल आया और अगले दिन आने को कह कर वापिस भेज दिया।

रात भर मैं सोचता रहा – पुनः प्राकृतिक पैर तो उसे प्राप्त हो नहीं सकता और कृत्रिम पैर की सहायता से उसे चलने में ही तकलीफ हो रही है, तो नृत्य करने में तो और भी होगी . . . फिर भी उसकी बातों में झलकती दृढ़ता को देख कर मैंने यही सोचा, कि इसकी इच्छाशक्ति यदि दृढ़ है . . . और अत्यधिक दृढ़ है, तो निश्चय ही यह सफलता प्राप्त करके रहेगी।

अगले दिन जब वह आयी, तो मैंने उसे 'उर्वशी दीक्षा' प्रदान की और 'उर्वशी साधना' की विधि समझायी और उससे कहा – ''साधना सम्पन्न करने के बाद नृत्य की शिक्षा पूर्ववत् प्रारम्भ कर देना और अपने मन से यह भावना निकाल देना, कि तुम्हारा एक पैर कृत्रिम है।''

मेरी आज्ञानुसार उसने साधना सम्पन्न की और नृत्य की शिक्षा पुनः लेनी प्रारम्भ की। आज उसे नृत्य करता देख कर कोई भी यह अनुमान नहीं लगा सकता, कि उसका एक पैर कृत्रिम है।

इसी सन्दर्भ में एक अन्य व्यक्ति के बारे में भी बता रहा हूं, सम्भवतः आप भी उसके बारे में जानते ही होंगे, वह एक अपाहिज व्यक्ति

है और उसने इंग्लिश चैनल को तैर कर पार किया, उस इंग्लिश चैनल को, जिसे पार करने में पूर्ण स्वस्थ व्यक्ति भी घबराता है।

बात मैं दृढ़ इच्छाशक्ति की कर रहा हूं। यदि आप ठान लें, कि मुझे यह कार्य करना ही है, हर हालत में करना ही है, तो निश्चय ही आप कर डालेंगे। किसी भी कार्य को आरम्भ करने से पूर्व यह अवश्य सोच लें, कि इसमें अधिक से अधिक क्या हानि होगी, क्योंकि मौत से बड़ी कोई सजा नहीं होती . . . और जब व्यक्ति यह सोच लेता है, कि मौत मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती, तो उसके शब्दकोश में से असम्भव जैसा शब्द निकल जाता है।

अभी मैं आपसे कह रहा था, कि दृढ़ इच्छाशक्ति का होना अत्यधिक आवश्यक है, क्योंकि इसके सहारे ही आप अपने जीवन से सम्बन्धित कार्य करते हैं। जब भौतिक जीवन में इच्छाशक्ति के द्वारा प्रत्येक कार्य किया जा सकता है, फिर साधना सम्पन्न करना तो अत्यधिक सहज है, क्योंकि ईश्वर ने मानव शरीर के निर्माण के साथ ही साथ इसमें समस्त साधनात्मक ज्ञान भी समाहित कर दिया है। अतः आपका यह कहना कहां तक उचित है — "मैं साधना कर भी सकता हूं या नहीं।"

जब जीवित रहने के लिये आप श्वास लेते हैं और यह नहीं सोचते, कि मैं कैसे श्वास लूं, क्योंकि इसी वायु में तो अन्य धर्म के लोग भी श्वास ले रहे हैं। जब आप जीवित रहने के लिये धर्म और जाति के भेद-भाव का ध्यान भी नहीं रखते और निश्चिन्तता पूर्वक श्वास लेते रहते हैं, तो फिर साधना को करने के लिये क्यों सोचते हैं, कि मैं कैसे कर सकता हूं, योग्य हूं भी या नहीं, मैं हिन्दू हूं, वह मुस्लिम, सिख या ईसाई है। ऐसा सोचना व्यर्थ है, अपने अमूल्य समय को नष्ट करना है।

अब तक आपके मन और दिमाग में स्पष्ट हो ही गया होगा, कि साधना करने के लिये उम्र, धर्म और जाति जैसा किसी भी प्रकार का कोई भी बंधन नहीं है। वर्तमान परिवेश को देखते हुए यह कहना अनुचित नहीं होगा, कि आज हमारे युवा वर्ग को साधना की तरफ आकृष्ट होने की अत्यधिक आवश्यकता है, क्योंकि मानव के सम्पूर्ण जीवन काल में

यौवन एक ऐसा ज्वार होता है, जब व्यक्ति के अन्दर असम्भव को भी सम्भव कर दिखाने की आकांक्षा होती है। अत्यधिक जोश और जुनून होता है युवा शरीर में।

अक्सर युवाओं के अन्दर व्याप्त यह जोश और उमंग सही दिशा-निर्देशन के अभाव में भ्रमित हो जाता है और दुष्प्रवृत्तियों के चंगुल में फंस कर लक्ष्यहीन हो जाता है।

परिणाम स्वरूप वह या तो नशे की गिरफ्त में आ जाता है या आतंकवादी बन जाता है या कोई डाकू, चोर अथवा उचक्का और फिर अपराध ही उनका जीवनसाथी बन जाता है। आये दिन समाचार पत्रों में ऐसे समाचार पढ़ने को मिलते रहते हैं।

इन समाचारों को पढ़ कर बार-बार मन में यही भाव आता है, कि 'काश! इन्हें सही दिशा-निर्देश मिला होता, तो आज इनमें से कोई बहुत बड़ा अधिकारी होता, डॉक्टर या इंजीनियर होता।' हम अपने ही हाथों अपने आपको और अपने समाज को गर्त में ढकेल रहे हैं . . . कितना दारुण समाज बन गया है आज का!

क्या आपने कभी सोचा है, कि इस स्थिति का दायित्व किसके ऊपर है?

आप सभी के ऊपर और आपके द्वारा निर्मित समाज के ऊपर, क्योंकि आपको भगवान के आगे सिर झुकाने में संकोच लगता है, मंदिर जाते हुए शर्म अनुभव करते हैं; यदि घर में बैठे पूजा कर रहे हैं और कोई आपके ऑफिस से आ जाये आपको बुलाने, तो आप यह कहलाने में चूकते नहीं हैं, कि 'साहब बाथरूम में हैं', क्योंकि आप नहीं कह पाते, कि 'मैं पूजा कर रहा हूं' . . . क्योंकि आपको अपनी मूल संस्कृति को सहजता से स्वीकार करने में शर्म आती है।

जब आप अपने आधार को ही अपने नीचे से हटा देंगे, तो आप कहां खड़े होंगे?

यही कारण है, कि आपकी स्थिति त्रिशंकु जैसी बन गई है।

जिस अंधकार में घुटन भरी जिन्दगी जीने के लिये आप विवश

हो गये हैं, क्या आप अपने बच्चों को भी ऐसी ही दर्दनाक जिन्दगी देना चाहते हैं? ऐसा मत करिये। अभी भी आपके पास इतना समय है, कि अपने आपको इस अंधकार से बाहर ला सकते हैं . . . और जब आप इस अंधकार से बाहर आने के लिये प्रयासरत होंगे, उस समय 'साधना' ही प्रकाश स्तम्भ के रूप में आपका मार्ग आलोकित करता हुआ दृष्टिगोचर होगा।

वैसे भी आने वाले युग के साथ चलने के लिये एक अवलम्ब, एक सहारे की आवश्यकता पड़ेगी ही, क्योंकि जब आप अपने बच्चे को सुखद जीवन व्यतीत करने के लिये उसे 'गर्भस्थ शिशु चैतन्य दीक्षा' प्रदान करायेंगे और उसकी उन्नति के लिये विविध साधनाएं सम्पन्न करेंगे, तो निश्चय ही आपका पुत्र कुशाग्र बुद्धि का होगा ही। वैसे भी देखा जाय, तो वर्तमान बच्चों को बौद्धिक स्तर पूर्वकाल के बच्चों से कहीं अधिक विकसित है।

किन्तु आज साधारणतः माता-पिता अपने बच्चों को, जब वे कोई प्रश्न पूछते हैं, तो उसका उत्तर इच्छा हुई तो बताया और यदि नहीं हुई, तो 'तुम बच्चे हो' कह कर टाल देते हैं। ऐसा बार-बार होने से बच्चे के अन्दर असंतुष्टि का भाव उत्पन्न हो जाता है, जो उसकी मानसिक उन्नति में बाधक होता है। इस प्रकार मां-बाप अपने दायित्व का पालन पूर्णता से नहीं कर पाते और अपनी इस कमी का एहसास उन्हें दुःख पहुंचाता ही है।

जैसा कि मैंने प्रारम्भ में बताया, कि ईश्वर ने समस्त शक्तियां प्रत्येक मानव शरीर में दे रखी हैं, अतः प्रत्येक व्यक्ति अपने आपको अद्वितीय बनाने की सम्भावनाओं से युक्त होता ही है।

आप यह विचार न करें, कि मैं साधनात्मक क्षेत्र के योग्य हूं भी या नहीं। भगवान ने अपनी तरफ से कोई कमी नहीं रखी है देने में।

हां! यह बात अवश्य है, कि प्रत्येक व्यक्ति को अनुकूल परिस्थितियां नहीं मिल पाती हैं, जिसके कारण उसका समुचित विकास नहीं हो पाता है।

व्यक्ति के विकास में उसका अपने बारे में अधूरा ज्ञान भी बाधक होता है, क्योंकि उसे यह पता ही नहीं है, कि मेरा शरीर है क्या? इसके अन्दर क्या-क्या गुण छुपे हुए हैं?

मनुष्य ने कभी अपने आपको समझने का प्रयास नहीं किया, किन्तु इतना जरूर किया, कि बाहरी तौर पर स्नान करना, सुगन्धित पदार्थों का प्रयोग करना, अच्छे वस्त्र पहिनना और सुस्वादिष्ट भोजन करना . . . और इतनी देखभाल करने के बाद भी वह बीमार पड़ जाता है!

कभी आपने सोचा है, कि हमारे पूर्वज दीर्घजीवी, सुगठित शरीर-सौष्ठव के क्यों होते थे? शायद आपका ध्यान इधर गया ही नहीं। यदि आप ध्यान दें, तो आपकी समझ में आयेगा, कि उन्होंने बाह्य रूप से तो अपने शरीर पर ध्यान दिया ही, क्योंकि उन्होंने भी सुगन्धित पदार्थों का प्रयोग किया और नाना वस्त्रालंकारों से अपनी देह को सुसज्जित भी किया; किन्तु उन्होंने बाह्य श्रृंगार के साथ ही साथ अपने शरीर के आन्तरिक सौन्दर्य को भी देखा, परखा और समझा, जिसके कारण वे अद्वितीय बन सके, जिसके कारण वे दीर्घजीवी बन सके, जिसके कारण उन्हें प्रकृति पर नियन्त्रण करने की क्षमता प्राप्त हुई।

यह हमारा दुर्भाग्य है, कि हम उनके इस अमूल्य ज्ञान को सञ्चित नहीं कर सके, सुरक्षित नहीं रख सके, आधुनिकता की अंधी दौड़ में भागते रहे और अपने आधार को देख कर भी अनदेखा करते रहे। मैं यह नहीं कह रहा हूं, कि आधुनिकता को अपनाना गलत है, मैं तो आपको यह बता रहा हूं, कि आधुनिक बनिये, किन्तु अपने आधार को अनदेखा मत करिये।

आधुनिक विज्ञान, जो अत्यधिक प्रगतिशील है, उसका कार्य क्या है, कभी आपने ध्यान दिया है?

उसका कार्य मात्र इतना ही है, कि हमारे ऋषि, मुनि, योगी, संन्यासी जिस बात को, जिस सिद्धान्त को आज से हजारों वर्ष पूर्व प्रतिपादित कर चुके हैं, उसी की सत्यता और प्रामाणिकता जन सामान्य

के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहा है। थोड़े और सरल शब्दों का प्रयोग करूं, तो आधुनिक वैज्ञानिक ऋषि-ज्ञान के आधार पर खड़े हो कर आधुनिक यंत्रों द्वारा अत्यधिक सहजता से साधनात्मक रहस्य को ज्ञात कर सकें, इसी प्रयास में रत हैं।

आधुनिक वैज्ञानिकों ने माइक्रो टैलिस्कोप का निर्माण किया है और उसके माध्यम से आकाश मंडल में अवस्थित विभिन्न ग्रहों और तारा मण्डलों का अध्ययन कर रहे हैं। सराहनीय है उनका यह प्रयास, किन्तु यह कार्य तो हमारे ऋषि हजारों वर्ष पूर्व अपनी नंगी आंखों के माध्यम से ही गणना कर उनके बारे में विस्तृत और प्रामाणिक जानकारी प्रदान कर चुके हैं . . . और वैज्ञानिक भी इस बात को स्वीकार करते हैं।

आप सोच रहे होंगे, कि ऐसा कैसे सम्भव है, कि नंगी आंखों से ही उन तारा मण्डलों, नक्षत्रों को देखा जाये, क्योंकि उनकी रोशनी पृथ्वी तक आने में हजारों वर्ष लग जाते हैं। कितने नक्षत्र ऐसे भी हैं, जिनका प्रकाश अभी पृथ्वी तक पहुंचा ही नहीं है।

— आप अपनी जगह सही हैं, क्योंकि मैंने पहले ही कहा है, कि हमारा ज्ञान पूर्व युग की अपेक्षा अत्यधिक न्यून हो गया है, अन्यथा इस तरह का प्रश्न आप नहीं करते। आपको पता होना चाहिए, कि अभी कुछ ही समय पहले यह पता चला, कि मनुष्य की आंख एक सेकेण्ड के बीसवें भाग में ही पन्द्रह लाख तरंगों को पकड़ कर उन्हें अन्दर समेट लेती है और अभी तक ऐसा एक भी लेंस नहीं बन पाया है, जो कि इतना अधिक सूक्ष्मातिसूक्ष्म ग्राही हो।

आज हम गर्व से भर उठते हैं, जब यह पढ़ते हैं, कि अमेरिका, जापान और विभिन्न देशों के वैज्ञानिकों ने एक उपग्रह का निर्माण किया और उसे अमुक ग्रह पर सफलता पूर्वक उतार दिया। मैं सोचता हूं, कि उन्होंने अपनी समझ में बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य किया होगा, किन्तु एक यंत्र को अथवा एक यान को किसी ग्रह पर उतार देना ही पर्याप्त नहीं है और न ही कोई इतनी बड़ी उपलब्धि है, जिस पर हम अत्यधिक गौरवान्वित हो सकें, क्योंकि मनुष्य के अन्दर वह क्षमता है, कि जिसके माध्यम से

वह सशरीर कहीं भी, किसी भी ग्रह पर जा सकता है, वहां पर रह सकता है, वहां विचरण कर सकता है, वहां के निवासियों के साथ मेल-जोल बढ़ा सकता है और ज्ञान-विज्ञान का आदान-प्रदान कर सकता है।

मेरी इस बात को सुन कर स्वाभाविक है, कि आपके दिमाग में फिर यह विज्ञान का कीड़ा कुलबुलाने लगा होगा, कि अभी वैज्ञानिकों ने यह तो कहा है, कि मंगल ग्रह पर जीवन होने की सम्भावना है; किन्तु जीवन है ही, ऐसी बात तो कहीं पढ़ने या सुनने में नहीं आई है।

आप खुद देख लीजिए अपने ज्ञान की न्यूनता। जब आप यह स्वीकार करते हैं, कि हमारी पृथ्वी पर कुछ ऐसे यान समय-समय पर आते रहते हैं, जिनके बारे में यह जानकारी नहीं मिल पायी है, कि वे कहां से आते हैं और क्यों आते हैं? . . . आते हैं – यह बात तो स्पष्ट है और जब उनके बारे में कोई जानकारी नहीं मिल पा रही है, तो यह भी निश्चित है, कि वे हमारे पृथ्वी ग्रह से सम्बन्धित नहीं हैं . . . तो फिर अन्य किसी ग्रह से ही उनका सम्बन्ध होना चाहिए।

वैज्ञानिक अभी तक यह नहीं सिद्ध कर पाये, कि किसी अन्य ग्रह पर जीवन है या नहीं; इसके पीछे बहुत छोटा सा कारण है, कि यदि किसी अन्य ग्रह का यान हमारी पृथ्वी पर आ कर सहारा के रेगिस्तान में या उत्तरी ध्रुव पर उतरे, तो वे भी यही कहेंगे, कि पृथ्वी पर जीवन नहीं है, वहां पर सिर्फ रेत या सफेद पदार्थ के ग्लेशियर हैं।

ठीक इसी प्रकार हमारे द्वारा भेजे गए यान भी उस ग्रंह विशेष के आबादी वाले क्षेत्र तक नहीं पहुंच सके और कह दिया, कि उस ग्रह पर जीवन नहीं है – ये सभी बातें अल्प ज्ञान का ही परिचय देती हैं।

इस तरह की बात कह कर ऐसा नहीं है, कि मैं अपने ज्ञान का प्रदर्शन आपके समक्ष कर रहा हूं। ऐसी बात कहने के पीछे मेरा उद्देश्य मात्र इतना ही है, कि हम पुनः उस स्थान, उस स्थिति को प्राप्त कर सकें, जहां हमारा ज्ञान आज से कई सौ वर्ष पूर्व ही पहुंच चुका था। जब ज्ञान के उस बिन्दु का बोध हमें हो जायेगा, तब उसके आगे होने वाले अन्वेषण सही अर्थों में हमारी प्रगति का बोध करा पायेंगे।

अपनी बात को थोड़ा और स्पष्ट कर रहा हूं, जिससे आप सहजता से अपने अन्दर मेरी बात को उतार सकें। जिस प्रकार एक छोटे बच्चे को शून्य से ले कर दस तक गिनती याद करा दी जाय और वह बच्चा निरन्तर अभ्यास न करे, तो धीरे-धीरे गिनती को भूलने लगेगा और एक समय ऐसा आयेगा, कि वह वापिस शून्य पर पहुंच जायेगा और उसे दस तक गिनती याद करने के लिये फिर से शून्य, एक, दो . . . नौ, दस तक की गिनती याद करनी पड़ेगी।

ठीक यही घटना हमारे ज्ञान के साथ भी घटित हुई और हम अपनी लापरवाही के कारण एक-एक सीढ़ी नीचे उतरते हुए ज्ञान की प्रारम्भिक अवस्था में आ पहुंचे . . . जिसके परिणाम स्वरूप हमें फिर से अपने ज्ञान पथ की यात्रा नये सिरे से करनी पड़ रही है।

आपको ये सभी बातें समझाने के पीछे कारण यही था, कि आप अपने आपको पहिचानें और अपने शरीर में छुपी अनन्त सम्भावनाओं का लाभ उठा कर अपने क्षेत्र में अद्वितीय बन सकें। मैं जानता हूं, कि आपके अन्दर ज्ञान की न्यूनता नहीं है, न्यूनता है तो इस बात की, कि आपको सही मार्गदर्शन और समुचित वातावरण नहीं मिल पाया, जिसके कारण आप अपना यथेष्ट विकास नहीं कर सके।

आपकी इस न्यूनता को समाप्त करने के लिये ही तो मैं आपको ज्ञान का वह आलोक स्तम्भ प्रदान कर रहा हूं, जिसके माध्यम से, जिसके सहारे आप स्वयं अपना मार्गदर्शन प्राप्त कर उन ऊंचाइयों पर पहुंच सकें, जहां पहुंचना अभी समस्त मानव समाज के लिये एक स्वप्न की बात है।

अन्त में मैं यही कहना चाहूंगा, कि हमारी ऋषि परम्परा ने साधना के माध्यम से जिन आयामों को पहले ही स्पर्श कर लिया था, विज्ञान आज उस ज्ञान के प्रथम सोपान पर खड़ा है। हमें अपने पूर्वजों पर गर्व है और रहेगा।

साधना और मानव शरीर

मायामानुष रूपिण

किसी आश्रम में एक शिष्य सेवा करने में सदैव तत्पर
किन्तु इतने पर भी उस आश्रम में सबसे अधि
मलिन, उपेक्षित व अन्य शिष्यों द्वारा उपहास का पा
भी बना रहता था

एक दिन एक अन्य गुरु उस आश्रम में आये। वह
रहने पर उन्होंने उसके लक्षणों को देखा और एक दृष्टि
में ताड़ लिया – यह तो अनमोल हीरा है,
किन्तु अन्य शिष्यों की अपेक्षा न तो इसके तन प
उज्ज्वल वस्त्र हैं न भोजन
में स्वादिष्ट पदार्थ?
– एकान्त होने पर वे उस
आश्रम के गुरु से
पूछे बिना न रह सके
'. . . आप उसे ही क्यों
प्रतिक्षण प्रताड़ना
देते रहते हैं आचार्य!
मेरी दृष्टि में तो वह
शिष्यत्व के लक्षणों से
पूर्णतया युक्त है।'
– 'क्योंकि वह मेरा
स्वप्न है, आने वाले युग
की सम्पत्ति है।'

साधना

के क्षेत्र में सफलता की यात्रा बहिर्मुखी न हो कर अन्तर्मुखी क्रिया है, अतः सबसे पहले हमें अपने आपको, अपने शरीर की अन्तर्शक्तियों को समझना आवश्यक है। जैसा कि सर्वविदित है, कि मानव देह पांच तत्त्वों से मिल कर बनी है। ये पंचतत्त्व हैं – भू, जल, अग्नि, वायु और ईथर (आकाश)। प्रत्येक दृश्यमान प्राणी या वस्तु, जिसे हम अपने चर्म चक्षुओं से देख सकते हैं, उसके अन्दर भू तत्त्व की प्रधानता होती है। पृथ्वी तत्त्व प्रधान होने के कारण ही हमें यह शरीर दिखाई देता है, वहीं शरीर यदि वायु तत्त्व प्रधान या ईथर तत्त्व प्रधान हो जाय, तो दिखना कठिन हो जायेगा, दिखेगा ही नहीं।

ऐसा उसी प्रकार सम्भव हो सकता है, जैसे कोई कार हमारे सामने से धीरे-धीरे चलती हुई गुजरती है तो हम देख लेते हैं, कि हमारे सामने से एक कार गई है और उस पर लिखा नम्बर भी हम पढ़ लेते हैं, किन्तु वही कार यदि बहुत तीव्र गति से हमारे सामने से निकले, तो हम यह अनुमान लगा लेंगे, कि कौन सी कार गई है, लेकिन उसका नम्बर तो हम पढ़ ही नहीं सकते।

कार के साथ में यह स्थिति इसलिये बनी, क्योंकि इसके अन्दर निहित ऊर्जा का वेग बढ़ता गया, इसके बढ़ने से उसके अन्दर व्याप्त स्पन्दन में वृद्धि हुई और धीरे-धीरे स्पन्दन बढ़ने से यह स्थिति आ गई, कि उस वस्तु को देख पाना कठिन हो गया।

कहने का तात्पर्य यह है, कि जब हम स्थूल वस्तु के अन्दर स्पन्दन बढा कर उससे इच्छित लाभ प्राप्त कर लेते हैं, तो जिस किसी ने भी अपने

अन्दर निहित ऊर्जा और स्पन्दन के बारे में ज्ञान प्राप्त कर उसे क्रियान्वित कर डाला, उसके लिये फिर कुछ भी असम्भव नहीं रहा। ऐसा नहीं है, कि फिर उसके सामने बाधाएं आती ही नहीं, किन्तु उनका निदान करने में उस व्यक्ति को किसी प्रकार की असुविधा या विलम्ब नहीं होता है। अपने शरीर को पहिचान कर, शरीर के अन्दर व्याप्त ऊर्जा के द्वारा वह इच्छानुसार शरीर की स्थिति बना कर कार्य सम्पन्न कर लेता है।

यह तो स्पष्ट है, कि ऊर्जा ही वह आधार है, जिसके द्वारा किसी भी वस्तु, व्यक्ति या किसी भी कार्य को सम्पन्न करने के लिये स्पन्दन उत्पन्न होता है और जिसके सहारे कार्य पूर्ण हो जाता है; किन्तु किसी वस्तु की बात कहें, जैसे – कार, तो इसमें ऊर्जा का स्रोत है उसका इंजन। अब प्रश्न हमारे सामने आता है –

- मनुष्य शरीर जिस ऊर्जा द्वारा संचालित है, उसका स्रोत क्या है?
- वह कौन सी क्रिया है, जिससे इस ऊर्जा को आवश्यकतानुसार स्पन्दित किया जा सके और इच्छित कार्य सम्पन्न किया हो सके?
- वह कौन सा माध्यम है, जिसके द्वारा यह कार्य सम्पन्न हो सके?

इस तरह के अनेकों प्रश्न हमारे समक्ष उत्पन्न होते हैं, किन्तु इन सभी प्रश्नों के उत्तर उपरोक्त तीन प्रश्नों के उत्तर में सिमटा हुआ है। यदि हम इन तीनों प्रश्नों के उत्तर को सही तरह से समझ लें और इनके अनुसार अपने आपको पहिचान लें, तो फिर हमारे सामने आने वाले प्रश्नों के उत्तर जानने के लिये किसी अन्य व्यक्ति अथवा पुस्तक के ज्ञान का सहारा नहीं लेना होगा, फिर हमारे स्वयं के पास इतना ज्ञान होगा, कि प्रत्येक प्रश्न या जिज्ञासा का समाधान अत्यधिक सहज होगा।

'कुण्डलिनी', 'दीक्षा एवं साधना' और 'गुरु' – ये वे तीन शब्द हैं, जिनके अन्दर ही सिमटा है हमारी जिज्ञासाओं का समाधान। इन तीनों को यदि हम समझ लें, इन तीनों के बारे में विस्तार पूर्वक ज्ञान प्राप्त कर लें, तो फिर हमारे लिये प्रत्येक क्रिया सहज हो जायेगी; क्योंकि 'कुण्डलिनी' वह स्रोत है, जहां ऊर्जा संग्रहित है, 'दीक्षा एवं साधना' वह क्रिया है, जिसके द्वारा इस ऊर्जा को स्पन्दन प्रदान किया जाता है और 'गुरु' वह ज्ञान है, वह माध्यम है, जिसके द्वारा यह कार्य सम्पन्न होता है।

मानव शरीर में ऊर्जा का स्रोत : कुण्डलिनी

जो ध्यावे फल पावे ...

कुण्डलिनी जागरण तो जीवन का सौभाग्य है,
पूरे शरीर की ऊर्जा का केन्द्रीभूत स्वरूप है,
आत्म से साक्षात्कार का सर्वोत्तम उपाय है।
— और इसके लिए जरूरी है मौन, निश्चल मौन।
— और इसी मौन को लेकर शरीर के अन्दर नीचे
की ओर उतरो, गहरे और गहरे,
पूरी गहराई के साथ, पूरी गम्भीरता और
निश्चलता के साथ।
— यह मौन तुम्हें नाभि
स्थल तक ले जायेगा,
थोड़ा और
खिसकने की जरूरत
है, मात्र तीन अंगुल
नीचे।
यही मूलाधार है,
यही ध्यान का
आधारभूत है,
— और यही
परमावस्था है।
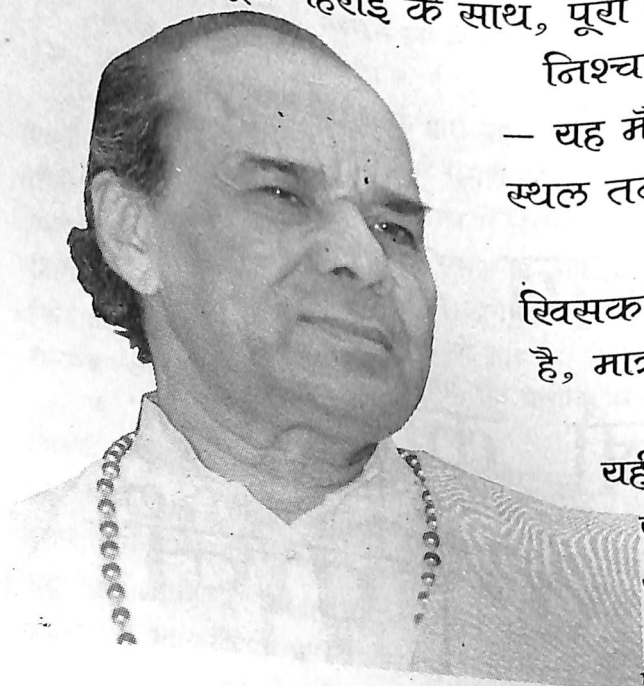
मानव शरीर को संचालित करने वाली ऊर्जा का स्त्रोत है – 'कुण्डलिनी'। प्रत्येक मनुष्य की जीवन शक्ति, जिसे हम 'प्राण' शब्द से सम्बोधित करते हैं, वह वास्तव में एक घनीभूत विद्युत चुम्बकीय शक्ति है, जो मानव देह को आधार प्रदान करने वाली रीढ़ की हड्डी के अन्तर्गत स्थित सुषुम्ना नाड़ी पर विभिन्न छः मुख्य स्थानों पर केन्द्रित है। मानव शरीर को चीर-फाड़ कर देखने पर स्पष्ट हुआ, कि रीढ़ की हड्डी के निचले भाग अर्थात् 'मूलाधार' से तीन नाड़ियां रीढ़ की हड्डी के अन्दर से होती हुई ऊपर मस्तिष्क तक पहुंचती हैं। इन तीनों नाड़ियों के मध्य की नाड़ी सुषुम्ना बिलकुल सीधी आगे बढ़ती है और इसके दोनों ओर स्थित 'इड़ा' और 'पिंगला' विभिन्न स्थानों पर इसके साथ जुड़ कर एक नाड़ियों का गुच्छा या केन्द्र बनाती हुई आगे चलती हैं। इन तीनों नाड़ियों में से सुषुम्ना सीधी चलती हुई मस्तिष्क तक पहुंचती है। इड़ा हृदय स्थान पर रुक जाती है और पिंगला आगे बढ़ कर आज्ञा चक्र अर्थात् भ्रू मध्य पर, जहां तृतीय नेत्र की अवधारणा है, वहां रुक जाती है।

इस प्रकार विभिन्न स्थानों पर गुम्फित नाड़ियों को चक्र के नाम से सम्बोधित किया गया है। इन छः चक्रों में भिन्न स्पन्दन को लिये हुए शक्ति सुप्तावस्था में घनीभूत होती है। इन शक्तियों के जाग्रत होने पर व्यक्ति को विभिन्न अलौकिक क्षमताएं प्राप्त होती हैं, जैसे – टेलीपैथी, हिप्नोटिज्म आदि। कुण्डलिनी के इन छः चक्रों मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत,

विशुद्ध एवं आज्ञा चक्र पर अलग-अलग स्पन्दन लिये जो शक्ति होती है, इनको जाग्रत करना ही हर योगी, ऋषि, और व्यक्ति की इच्छा होती है।

आध्यात्मिक चिन्तन मूलत: भारतीय वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड एवं इस ब्रह्माण्ड की प्रत्येक दृश्यमान वस्तुएं पांच तत्त्वों से निर्मित हैं। ये पंच तत्त्व हैं – पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश (ईथर), जो वास्तव में अन्य कुछ नहीं, भिन्न-भिन्न स्पन्दनों से युक्त ऊर्जा शक्तियां हैं। इनमें व्यांप्त स्पन्दन ही विभिन्न चक्रों के स्पन्दन के समान होता है, एक प्रकार से ये चक्र और पांच तत्त्व एक-दूसरे के बोधक ही हैं। इनका सम्बन्ध निम्नवत् होता है –

1. पृथ्वी तत्त्व न्यून स्पन्दन युक्त शक्ति होती है, जो मूलाधार चक्र पर घनीभूत है।
2. जल तत्त्व का स्पन्दन पृथ्वी तत्त्व से अधिक होता है, यह स्वाधिष्ठान चक्र पर घनीभूत है।
3. अग्नि तत्त्व नाभि प्रदेश में स्थित मणिपुर चक्र की शक्ति का प्रतिनिधित्व करता है।
4. वायु तत्त्व से आपूरित होता है अनाहत चक्र, इसकी स्थिति व्यक्ति के हृदय स्थल पर होती है।
5. आकाश तत्त्व प्रधान होता है विशुद्ध चक्र, जो मानव शरीर के कण्ठ प्रदेश में स्थित होता है।
6. समस्त दिव्य शक्तियों का केन्द्रीकरण, आज्ञा चक्र पर होता है, इसे तृतीय नेत्र भी कहते हैं, यह भ्रू मध्य में स्थित होता है।
7. परब्रह्म का ज्ञान, उनका वास सहस्रार में होता है, जो सिर के मध्य भाग में जहां पर चोटी रखी जाती है, वहां स्थित होता है।

अब एक-एक करके क्रमवार सभी चक्रों के गुण-धर्म व इनके कार्य स्पष्ट कर रहा हूं, जिससे इनके बारे में स्पष्ट व प्रामाणिक ज्ञान प्राप्त हो सके। प्रत्येक चक्र का आकार कमल पुष्प के समान होता है। प्रत्येक चक्र विभिन्न शक्तियों के घनीभूत होने के कारण बनते हैं। जिस चक्र पर जितनी

शक्तियां होती हैं, व्यक्ति को उतनी ही उपलब्धियां प्राप्त होती हैं। इन शक्तियों को 'दल' शब्द से सम्बोधित किया गया है।

उदाहरणार्थ मूलाधार चक्र चार दलों वाले कमल के समान होता है, अर्थात् इस चक्र पर चार विशिष्ट शक्तियां होती हैं, जिनके जाग्रत होने पर व्यक्ति को चार उपलब्धियां प्राप्त होती हैं। इन प्रत्येक दलों के बीज मंत्र अलग-अलग होते हैं और उस चक्र विशेष का भी एक विशिष्ट मूल बीज मंत्र होता है, जिसमें उस चक्र के सभी दलों की बीज शक्तियों का समाहितीकरण रहता है।

किसी चक्र विशेष के मूल बीज मंत्र का जप करने पर उसमें व्याप्त सभी शक्तियां जाग्रत होती हैं और यदि उस चक्र के किसी दल विशेष का बीज मंत्र जप किया जाय, तो ऐसी अवस्था में उस दल विशेष में निहित शक्ति का ही जागरण होता है।

चक्र	तत्त्व	बीज मंत्र	आत्मावस्था
मूलाधार चक्र	पृथ्वी	लं	भू
स्वाधिष्ठान चक्र	जल	वं	भुवः
मणिपुर चक्र	अग्नि	रं	स्वः
अनाहत चक्र	वायु	यं	महः
विशुद्ध चक्र	आकाश	हं	जनः
आज्ञा चक्र	दिव्य शक्तियां	नं	तपः
सहस्त्रार	गुरु (ब्रह्म)	ॐ	सत्यम्

अपनी बात महाकवि कालिदास का उदाहरण दे कर स्पष्ट करूं, तो आप सरलता से मेरी बात समझ सकेंगे।

कालिदास के मन में एकमात्र यही भावना थी, कि उन्हें श्रेष्ठतम विद्वान बनना है और इसी भावना के कारण उन्होंने विशुद्ध चक्र के केवल एकमात्र दल को, जो सरस्वती शक्ति प्रधान है, उसी का जप किया और श्रेष्ठतम विद्वान बने।

उनकी इस साधना का ही फल है, कि आज तक कोई उनके स्तर तक नहीं उठ सका, क्योंकि किसी ने उनकी तरह पूर्णता के साथ साधना सम्पन्न की ही नहीं।

अब मैं क्रमशः प्रत्येक चक्र की शक्तियों का ज्ञान प्रदान कर रहा हूं –

मूलाधार

जिस प्रकार पृथ्वी व्यक्ति का आधार है, उसी प्रकार मानव की जीवनी शक्ति का आधार चक्र है – मूलाधार। कुण्डलिनी जागरण की क्रिया में यही पहला चक्र होता है, जिस पर अधिकांश शक्तियां केन्द्रित रहती हैं, किन्तु उन शक्तियों का स्पन्दन न्यून होता है, क्योंकि यह चक्र पृथ्वी तत्त्व प्रधान होता है। इसका स्थान गुदा भाग एवं लिंग प्रदेश के मध्य में होता है।

अतः यहां स्थित शक्तियां जिन्हें हम 'सत्व' के नाम से सम्बोधित करते हैं, वे गुरुत्वाकर्षण शक्ति के फलस्वरूप ही नीचे की ओर अग्रसर होती हैं। यह सत्व पुरुषों में 'वीर्य' और स्त्रियों में 'रज' का रूप धारण कर लिंग तथा योनि प्रदेश की ओर प्रवाहित होता है, इनके सम्मिलन से ही एक नये मानव का निर्माण होता है।

यदि इस सत्व का प्रवाह ऊर्ध्वमुखी हो जाये, तब मानव की यही शक्ति उसे श्रेष्ठत्व प्रदान कर देती है।

मूलाधार का स्वरूप चार पंखुड़ियों वाले कमल के सदृश बताया गया है। इन चारों दलों के चार बीज मंत्र होते हैं, जिनको चैतन्यता प्रदान करने पर मनुष्य को चार विशिष्ट उपलब्धियों की प्राप्ति होती है –

वं – यह पहले दल का बीज मंत्र है। इसके द्वारा 'रस' अर्थात् प्राण शक्ति की वृद्धि हो कर पूरा स्नायु तंत्र चैतन्य हो जाता है।

शं – द्वितीय दल के इस बीज के चैतन्य होने पर 'रूप' अर्थात् आत्मिक और मानसिक सौन्दर्य, हास्य व तनाव मुक्ति की प्राप्ति होती है।

षं — यह तृतीय दल का द्योतक है। इसके चैतन्य होने पर 'मज्जा' पुष्ट होती है, जिससे शारीरिक बल में वृद्धि होती है।

सं — चौथे दल के कारण 'सौन्दर्य' में वृद्धि होती है तथा एक चुम्बकीय व्यक्तित्व की प्राप्ति होती है।

मूलाधार का जागरण भस्त्रिका प्राणायाम द्वारा सम्भव होता है। भस्त्रिका का अर्थ है – एक लयबद्ध रूप से अत्यधिक तीव्रता के साथ श्वास-प्रश्वास की क्रिया। इस क्रिया के कारण शरीर में लचीलापन आता है, जिसका होना आवश्यक है, क्योंकि जब शक्ति चैतन्य हो, तो उसे विस्तारित होने के लिये उचित स्थान मिल सके और मानव को कष्ट न हो।

मूलाधार के जाग्रत होने पर इस चक्र की सुप्त शक्तियां पहले जाग्रत होती हैं, फिर धीरे-धीरे अपने स्पन्दन को प्राप्त करती हैं, तत्पश्चात् इनके स्पन्दन में वृद्धि होती है और ये अगले चक्र की ओर अग्रसर होती हैं, फिर उस चक्र पर स्थित शक्तियों को जाग्रत करती हैं।

यही क्रम प्रत्येक चक्र के साथ चलता रहता है और क्रमशः आगे गतिशील होती यह क्रिया मस्तिष्क को चैतन्य कर उस नाड़ी को जाग्रत कर देती है, जहां अमृत तत्त्व एकत्र होता है, जिससे मानव में अनन्त शक्तियों का उदय होता है।

मूलाधार के जागरण पर मानव की आत्मा और शरीर में ज्ञान की पहली किरण का प्रादुर्भाव होता है, जिसका रंग हल्का जामुनी होता है, यह किरण तीव्र तेज युक्त होती है।

मूलाधार का मूल बीज मंत्र है – 'लं', इसके जप द्वारा ही इस चक्र को जाग्रत किया जाता है, जिसके कारण उपरोक्त वर्णित चारों बीज स्वतः जाग्रत हो जाते हैं। इसके अलावा गुरु द्वारा दीक्षा प्राप्त कर भी इसे जाग्रत करते हैं।

स्वाधिष्ठान

तीव्र भस्त्रिका की क्रिया द्वारा मूलाधार में स्थित शक्ति जाग्रत होती है और अपने अन्दर निहित विशेषताओं के अनुसार उस व्यक्ति विशेष में

परिवर्तन कर देती है, फिर यह शक्ति अपने पथ पर आगे की ओर गतिशील होती हुई स्वाधिष्ठान चक्र पर पहुंचती है और उस चक्र पर सुप्त शक्तियों को प्रेरित कर जाग्रत करती है।

स्वाधिष्ठान चक्र 'जल तत्त्व' प्रधान होता है। जल तत्त्व का स्पन्दन भू तत्त्व से अधिक होता है। मूलाधार की शक्ति जब स्वाधिष्ठान की शक्ति से मिलती है, तो उसका भी स्पन्दन बढ़ जाता है और दोनों शक्तियां एक हो जाती हैं। इस चक्र पर पहुंचने पर साधक को 'प्राणायाम' सिद्ध करने की आवश्यकता होती है, क्योंकि प्राणायाम ही वह माध्यम है, जिसके द्वारा हम इन शक्तियों पर नियन्त्रण प्राप्त कर सकते हैं अन्यथा अनियन्त्रित अवस्था में यह शक्ति पुनः अधोगामी हो जाती है।

स्वाधिष्ठान चक्र मानव शरीर में लिंग मूल के पीछे स्थित होता है और यही कारण बनता है नयी पीढ़ी को जन्म देने का। यहां स्थित शक्तियों को 'सत्व' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। यह सत्व पुरुषों में 'वीर्य' और स्त्रियों में 'रज' का रूप धारण कर लिंग तथा योनि प्रदेश की ओर प्रवाहित होते हैं। इनके सम्मिलन से ही एक नये मानव का निर्माण होता है। यदि इस सत्व का प्रवाह ऊर्ध्वमुखी हो जाये, तब मानव की यही शक्ति उसे श्रेष्ठत्व प्रदान कर देती है।

जब यह चक्र जाग्रत होता है, तो मानव में काम-वासना अत्यधिक तीव्रता से बढ़ती है . . . तब उसे अपने आपको नियन्त्रित करने के लिये प्राणायाम की आवश्यकता पड़ती है। इस चक्र पर सुप्त शक्तियों के जाग्रत होने पर व्यक्ति को अपने मनोनुकूल संतान पैदा करने की क्षमता प्राप्त होती है। संतान तो सभी पैदा कर लेते हैं, लेकिन उसी संतान को पैदा करने के लिये विवश हैं, जो गर्भ में है, चाहे वह दुष्टात्मा हो या पुण्यात्मा अथवा लड़का हो या लड़की।

तार्किक बुद्धि वालों के गले के नीचे मेरी यह बात नहीं उतरेगी, किन्तु जो सत्य है, जो प्रामाणिक है, उसे तो मैं बताऊंगा ही। मैं तो बस इतना ही कह सकता हूं, कि यदि विश्वास न हो, तो वे स्वयं अपनी कुण्डलिनी जाग्रत कर मेरी बात को परख सकते हैं . . . उन्हें अवश्य भरोसा हो जायेगा।

स्वाधिष्ठान चक्र के जाग्रत होने पर व्यक्ति का व्यक्तित्व चुम्बकत्व प्रधान हो जाता है, वह किसी व्यक्ति से बात करे या ना करे, लोग उससे बात करने के लिये लालायित बने रहते हैं।

इसके साथ ही आध्यात्मिक दृष्टि से देखें, तो उसे जल पर नियन्त्रण प्राप्त हो जाता है, सरल शब्दों का प्रयोग करूं, तो 'जल गमन प्रक्रिया' सिद्ध हो जाती है।

मैं जानता हूं, कि आपकी तार्किक बुद्धि, छिद्रान्वेषी भावना मेरी बात को सत्य मानने से रोकेगी, किन्तु 'ऐसा कैसे सम्भव है' सोचने में अपना अमूल्य समय व्यतीत करने की अपेक्षा इसे स्वयं परख कर देख लें। यदि थोड़ी सी भी दृष्टि आप अपने आस-पास के लोगों पर डालेंगे, तो पायेंगे, कि कुछ ऐसे मानव शरीर धारी हैं, जो सैकड़ों किलो वजन का सामान एक फूल की तरह उठा लेते हैं, मीलों दौड़ आते हैं कुछ पलों में, वहीं कुछ ऐसे मानव शरीर धारी भी हैं, जो किलो-दो किलो समान उठाने में भी थक जाते हैं और दस-बीस मीटर चलना पड़े, तो पसीने से तर-ब-तर हो जाते हैं।

क्या इससे यह स्पष्ट नहीं होता, कि मानव शरीर में अनन्त शक्तियां और अनन्त सम्भावनाएं छिपी हैं, जो इन्हें पहिचान लेता है, वही इनका उपयोग कर लेता है।

स्वाधिष्ठान चक्र का रंग सिन्दूरी होता है और इसका मूल बीज मंत्र है – 'वं'।

यह चक्र छः कमल दल का होता है, अर्थात् इस चक्र के जाग्रत होने पर छः उपलब्धियां मानव को प्राप्त होती हैं, जो निम्नवत् हैं –

बं – इस चक्र के प्रथम दल, प्रथम शक्ति का बीज 'बं' होता है, इसके चैतन्य होने से व्यक्ति का गृहस्थ जीवन सुखी होता है। इस शक्ति के जाग्रत होने पर वह चाहे स्त्री हो या पुरुष, उसकी नपुंसकता समाप्त हो जाती है और वे सुखी दाम्पत्य जीवन का आनन्द पूर्ण निरोगी बन कर उठाते हैं। इस शक्ति

द्वारा पूर्ण पुरुषत्व और पूर्ण स्त्रीत्व प्राप्त होता है अर्थात् इस दल की उपलब्धि है – 'वीर्य'' और 'रज'।

भं – इस द्वितीय दल की शक्ति जाग्रत होने पर 'वंश' की उपलब्धि होती है। पूर्व विवेचनानुसार मनोनुकूल इच्छित संतान की प्राप्ति इसके द्वारा सम्भव होती है।

मं – इस तृतीय दल या शक्ति द्वारा प्राप्त होने वाली क्षमता है – 'पौरुष' अर्थात् निर्भयता, निडरता। जीवन में आने वाली किसी भी प्रकार की बाधा पर विजय प्राप्त करने की क्रिया आ जाती है, फिर यह बात कोई मायने नहीं रखती, कि उसका शारीरिक डील-डौल कैसा है।

यं – चतुर्थ दल में निहित शक्ति के द्वारा 'ब्रह्मचर्य' की उपलब्धि होती है। ब्रह्मचर्य का अर्थ यह कदापि नहीं है, कि काम-भावना का त्याग करें। ब्रह्मचर्य का अर्थ है - काम-भावना पर पूर्ण नियन्त्रण एवं एक सुनियोजित विवाहित जीवन।

रं – चतुर्थ दल के जागरण के कारण जब व्यक्ति को काम-भावना पर नियन्त्रण की क्षमता प्राप्त हो जाती है, तब उसका वीर्य सत्व में परिवर्तित हो जाता है और पूरे शरीर को कांति युक्त बना देता है। इसके बाद पंचम दल की शक्ति जाग्रत होती है, तब उसे 'स्वतः आकर्षण' की प्राप्ति होती है।

लं – षष्टम् दल की उपलब्धि है – 'जागृति'। इसके द्वारा व्यक्ति भौतिक संसाधनों का कुशलता पूर्वक उपयोग करने की क्षमता प्राप्त कर लेता है।

इस प्रकार स्पष्ट है, कि स्वाधिष्ठान चक्र के जाग्रत होने पर व्यक्ति को समस्त सांसारिक व भौतिक सुखों के सदुपयोग का ज्ञान प्राप्त होता है और स्वतः ही उसकी समस्त कामनाएं पूर्ण होने लगती हैं।

मणिपुर

अग्नि तत्त्व से प्रतिनिधित्व प्राप्त यह चक्र मानव शरीर में नाभि स्थल पर स्थित होता है। नाभि के महत्त्व का ज्ञान प्रत्येक पुरुष को होता ही है। नाभि स्थल ही वह स्थान है, जिसके द्वारा गर्भस्थ शिशु मां से भोजन और वायु अर्थात् जीवनी शक्ति प्राप्त करता है।

इस चक्र का जागरण भस्त्रिका और प्राणायाम के मिश्रित प्रयोग के द्वारा सम्भव होता है। इस क्रिया को किसी योग्य गुरु के सान्निध्य में सीखना चाहिए, ऐसे गुरु के सान्निध्य में, जिसने स्वयं का मणिपुर चक्र जाग्रत किया हो।

इस चक्र के जाग्रत होने पर व्यक्ति पूर्ण रूप से मनुष्यत्व प्राप्त कर लेता है। यह चक्र सीमा रेखा है मनुष्यत्व और देवत्व के बीच।

इस चक्र के जाग्रत होने के पश्चात् जब कुण्डलिनी शक्ति आगे बढ़ती है, तब मनुष्य का प्रत्येक कदम देवत्व की ओर अग्रसर हो जाता है। वह पूर्ण भौतिकता का उपभोग दैवीय गुणों के आधार पर करता है, तब मानव का चिन्तन और विचार आध्यात्मिकता से स्वतः ही प्रेरित होने लगता है।

इस चक्र के जागरण पर व्यक्ति सभी पापों से मुक्त हो जाता है और उसके हृदय में दया, ममता, करुणा, सौहार्द्र का उदय होने लगता है, फिर उस पर सांसारिक दोष – क्रोध, ईर्ष्या, झूठ, व्यभिचार आदि का कोई प्रभाव व्याप्त नहीं होता है। समस्त दोषों से मुक्त होने के कारण उसकी वाणी ओजस्वी हो जाती है, चेहरे और पूरे शरीर के चारों तरफ व्याप्त चुम्बकीय शक्ति द्विगुणित हो जाती है तथा उसके मुख से उच्चरित प्रत्येक शब्द सत्य होता है। विचारों में परिवर्तन के कारण उसके हृदय में शांति व्याप्त हो जाती है और उसे ध्यान की प्रथमावस्था प्राप्त होती है।

मणिपुर चक्र शरीर का केन्द्र बिन्दु है। यहां कई प्रमुख नाड़ियां आ कर मिलती हैं। इस चक्र के जागरण पर दस उपलब्धियां प्राप्त होती हैं, क्योंकि इस चक्र में दस दल नीले रंग के कमल सदृश्य होते हैं।

इस चक्र का मूल बीज मंत्र है – 'रं'। इससे प्राप्त उपलब्धियां क्रमशः निम्नवत् हैं –

ङं – इस दल के जागरण पर पाचन क्रिया से सम्बन्धित नाड़ियों को पूर्ण चैतन्यता प्राप्त होती हैं, जिससे पेट से सम्बन्धित व्याधियों का शमन हो जाता है और व्यक्ति को पूर्ण शारीरिक स्वास्थ्य प्राप्त होता है।

ढं – इस दल के जाग्रत होने पर व्यक्ति को योग बल का पूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है और वह अपने शरीर और शरीरस्थ समस्त नाड़ियों को नियन्त्रित करने की क्षमता प्राप्त कर अध्यात्म के पथ पर अग्रसर होता है, जिसके कारण वह एक ही आसन पर घंटों बैठ सकता है, श्वास को पूर्ण नियन्त्रित कर सकता है, कई दिनों तक बिना भोजन, वायु के रह सकता है, एक प्रकार से उसे अपनी शारीरिक शक्तियों पर नियन्त्रण प्राप्त हो जाता है।

णं – आकाश मार्ग द्वारा कहीं भी आने-जाने की क्षमता इस दल के जागरण द्वारा ही प्राप्त होती है।

तं – इस चतुर्थ दल के जाग्रत होने पर जल पर उसी प्रकार चलने की क्षमता प्राप्त होती है, जैसे व्यक्ति भूमि पर चलता है।

थं – इस दल के द्वारा प्राप्त उपलब्धि है – स्वयं को अदृश्य बनाने की क्रिया।

दं – पृथ्वी की सतह पर अत्यन्त तीव्र गति अर्थात् वायु वेग से चलने की क्षमता इस दल के जाग्रत होने पर प्राप्त होती है।

धं – इस दल के जाग्रत होने पर व्यक्ति को पशु-पक्षी तथा पेड़-पौधों से वार्तालाप अर्थात् उनकी भाषा समझने का ज्ञान प्राप्त होता है।

नं – इस दल के जागरण द्वारा व्यक्ति को प्रकृति पर नियन्त्रण की क्षमता प्राप्त होती है, वह ऋतुओं के प्रभाव से रहित होता है और किसी भी प्राकृतिक विपदा को नियन्त्रित करने की क्षमता प्राप्त कर लेता है। वह अपनी सुविधानुसार प्रकृति को अपनी इच्छा के अनुरूप ढाल सकता है।

पं — इस दल के जागरण पर नेतृत्व की क्षमता प्राप्त होती है और षोडश गुणों की उपलब्धि होने के कारण उसके विचार मानव कल्याण के लिये ही होते हैं तथा वह एक सक्षम मार्गदर्शक सिद्ध होता है। इसी दल के जाग्रत होने के कारण 'विवेकानन्द' विश्वविख्यात हुए।

फं — इस दल के जाग्रत होने पर सर्वोच्च उपलब्धि 'ध्यान' की होती है। इसके कारण ही ध्यान की क्रिया द्वारा दिव्य आनन्द की अनुभूति होती है और वह प्रत्येक प्रकार की आध्यात्मिक उन्नति के लिये तैयार हो जाता है।

मणिपुर चक्र के जागरण के द्वारा ध्यान के साथ ही साथ आयुर्वेद का भी समग्र रूप से व्यक्ति को ज्ञान प्राप्त हो जाता है और प्रकृति प्रदत्त समस्त उपहारों का समुचित लाभ उठाने में वह सक्षम हो जाता है।

अनाहत

मणिपुर चक्र से आगे यात्रा करते हुए कुण्डलिनी शक्ति हृदय में स्थित 'वायु तत्त्व' प्रधान अनाहत चक्र में सुप्त शक्तियों पर प्रहार कर उन्हें जाग्रत करती है। इस शक्ति के जाग्रत हो कर पूर्ण स्पन्दन प्राप्त करने पर आत्मा का ब्रह्माण्ड में सर्वत्र व्याप्त परमात्मा की अखण्ड शक्ति से सम्बन्ध जुड़ जाता है और व्यक्ति को भूत, भविष्य और वर्तमान का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। उसे यह क्षमता प्राप्त हो जाती है, कि पूर्वकाल में घटित प्रत्येक घटना को — चाहे वह महाभारत का युद्ध हो या शकुन्तला-दुष्यन्त का प्रेम विवाह — इन सभी क्रियाओं को देख सकता है।

इसी प्रकार वह भविष्यकाल की घटनाओं के बारे में भी जानकारी प्राप्त कर सकता है। यह बात सत्य है, कि वे घटनाएं अभी घटित नहीं हुई हैं, किन्तु उनका अंकन तो काल के गर्भ में होता ही है। इस प्रकार स्पष्ट है, कि इस चक्र के जागरण द्वारा व्यक्ति की आत्मा का परब्रह्म से प्रथम परिचय, प्रथम मिलन होता है, जिसके फलस्वरूप व्यक्ति त्रिकालदर्शी अर्थात् भूत, भविष्य और वर्तमान, तीनों कालों का ज्ञाता हो जाता है।

अनाहत चक्र लाल रंग के कमल की बारह पंखुड़ियों से निर्मित होता है। इस चक्र का मूल बीज मंत्र है – 'यं'। अनाहत चक्र द्वारा निम्न उपलब्धियां प्राप्त होती हैं –

कं – ध्यान के आगे की स्थिति होती है – 'समाधि'। इस दल के द्वारा उपलब्ध होती है – निर्विकल्प समाधि।

खं – मानव की आत्मा अत्यन्त शक्ति सम्पन्न है तथा सभी ब्रह्मरूपी शक्तियों का केन्द्र है, जिसके माध्यम से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पर नियन्त्रण प्राप्त किया जजा सकता है। इस दल के जागरण से अत्मा 'स्व:' की अवस्था से निकल कर 'मह' में पहुंच जाती है और व्यक्ति को ब्रह्म से निकटता प्राप्त होने का आभास होने लगता है।

गं – इस दल की शक्ति के जाग्रत होने पर व्यक्ति को भूत काल का ज्ञान हो जाता है और वह किसी भी व्यक्ति के जीवन में घटित घटनाओं को सहजता से जान लेता है।

घं – इस दल की उपलब्धि है – वर्तमान समय में घटित हो रही घटनाओं को सूक्ष्मता से देखना, हजारों मील दूर रह कर भी।

ङं – इस दल की शक्ति के जाग्रत होने पर व्यक्ति को भविष्य ज्ञान प्राप्त होता है।

चं – जीवन के हर क्षण का अपना एक अलग अस्तित्व और महत्त्व होता है, यदि जीवन में कोई सुनहरा अवसर निकल जाये, तो वह वापिस नहीं मिलता। इस तरह की चूक न हो, इसके लिये 'काल ज्ञान' होना आवश्यक है और इस षष्टम् दल की शक्ति के जाग्रत होने पर यही क्षमता प्राप्त होती है।

छं – इस दल की शक्ति में निहित है 'विचार संक्रमण की क्षमता', जिसके कारण किसी भी व्यक्ति के मस्तिष्क में व्याप्त विचारों को जाना जा सकता है और अपने अनुसार परिवर्तन किया

जा सकता है। इसी क्षमता को टेलीपैथी या हिलीपैथ्री के नाम से जाना जाता है।

जं — 'परकाया प्रवेश' के अनेक दृष्टान्त पढ़ने और सुनने में आते हैं, इस दल में निहित शक्ति के द्वारा ही यह क्रिया सम्पन्न होती है।

झं — इस दल की उपलब्धि है — 'ब्रह्माण्ड भेदन की क्रिया का ज्ञान होना', जिसके द्वारा व्यक्ति किसी भी ग्रह, किसी भी लोक पर आने-जाने में सक्षम होता है।

ञं — अनाहत चक्र के दसवें दल के द्वारा ब्रह्माण्ड के किसी भी भाग को, वहां हो रही क्रियाओं को घर बैठे देखना सम्भव होता है। इस शक्ति से सम्पन्न व्यक्ति के सामने देवी-देवता सदेह उपस्थित हो अपना सान्निध्य प्रदान करते हैं।

टं — इस दल में निहित शक्ति की उपलब्धि है — 'कायाकल्प' अथवा देह परिवर्तन की क्रिया, जिसके द्वारा व्यक्ति चिरयौवनवान बना रह सकता है।

ठं — इस दल की उपलब्धि है — 'अष्टगंध'। श्रीकृष्ण की तरह व्यक्ति की देह से एक दिव्य गंध प्रवाहित होने लगती है, जिसके कारण कोई भी मनुष्य, जीव-जन्तु, यहां तक कि पेड़-पौधे भी आकर्षित व उल्लसित हो उठते हैं।

विशुद्ध

अनाहत चक्र पर सुप्त शक्तियों के जागरण के फलस्वरूप व्यक्ति की आत्मा का ब्रह्माण्ड से संयोग स्थापित होता है, किन्तु घनिष्ठता का क्रम इस चक्र से आगे, जब कुण्डलिनी शक्ति धीरे-धीरे अग्रसर होती हुई विशुद्ध चक्र पर पहुंचती है, तब आरम्भ होता है।

विशुद्ध चक्र के जाग्रत होने पर शरीर में दैवी शक्तियों का प्रभाव त्वरित वेग से व्याप्त होता है, किन्तु स्थायित्व प्राप्त होने के लिये यहां आवश्यकता पड़ती है सद्गुरु द्वारा प्रदत्त 'शक्तिपात' क्रिया की, जिसके

कारण विशुद्ध चक्र का स्पन्दन अपने मूल स्पन्दन को प्राप्त कर लेता है। विशुद्ध चक्र का स्थान कण्ठ प्रदेश है और यह चक्र 'आकाश तत्त्व' से प्रतिनिधित्व प्राप्त है।

इस चक्र के जागरण के फलस्वरूप व्यक्ति के कण्ठ में वाक् देवी – सरस्वती की स्थापना हो जाती है और उसके जैसा अद्वितीय विद्वान दूसरा नहीं होता है। एक साधारण से गड़ेरिये के शरीर में इस विशुद्ध चक्र के जागरण के फलस्वरूप ही हमें कालिदास के रूप में एक अन्यतम बिद्वान प्राप्त हुआ, जिसकी बराबरी का विद्वान अभी तक नहीं हो सका। ऐसा नहीं है, कि ऐसा अब सम्भव नहीं हो सकता, ऐसी क्रिया अभी भी सम्भव है, आवश्यकता है तो मात्र इतनी, कि व्यक्ति पूर्ण निष्ठा और लगन से विशुद्ध चक्र को जाग्रत करने के लिये दृढ़प्रतिज्ञ हो।

विशुद्ध चक्र सोलह दलों वाला पीले रंग का कमल है। इसका मूल बीज मंत्र 'हं' है। इसके द्वारा निम्न उपलब्धियां प्राप्त होती हैं –

अं – इस दल के जाग्रत होने पर सरस्वती की स्थापना होती है और व्यक्ति को प्राचीन व आधुनिक विद्याओं का ज्ञान प्राप्त होता है।

आं – इस दल की उपलब्धि है – 'वाक् सिद्धि' अर्थात् व्यक्ति के मुंह से जाने-अनजाने में निकलने वाला शब्द भी सत्यापित होता ही है।

इं – इस तृतीय दल की उपलब्धि है – 'श्राप तथा वरदान देने की क्षमता प्राप्त होना।' मानव शरीर में 360 दैवी शक्तियों का वास होता है, जिसमें से आधे वाम भाग में व आधे दक्षिण भाग में स्थित होते हैं। इस चक्र के जागरण के फलस्वरूप व्यक्ति का इन पर नियन्त्रण स्थापित हो जाता है। श्राप देने पर वाम भाग के देवी-देवता और वरदान देने पर दक्षिण भाग के देवी-देवता उसे फलीभूत करते हैं।

ईं – विशुद्ध चक्र के चतुर्थ दल के जागरण के फलस्वरूप मूर्ख व

अनपढ़ व्यक्ति भी सम्पूर्ण शास्त्रों का ज्ञाता हो जाता है और उसे शुद्ध व सात्विक जीवन का महत्त्व ज्ञात हो जाता है। इस दल की ही उपलब्धि है — आयुर्वेद, ज्योतिष, सूर्य सिद्धान्त, स्वर्ण विज्ञान आदि प्रमुख शास्त्रों का ज्ञान व इस क्षेत्र में श्रेष्ठता।

उं — धारा प्रवाह बोलने की क्षमता इस दल की उपलब्धि है। व्यक्ति किसी भी विषय पर पूर्ण प्रामाणिकता के साथ प्रवचन कर सकता है।

ऊं — कभी-कभी किसी व्यक्ति के बारे में यह कहते हुए सुना जाता है, कि यह व्यक्ति जन्मजात लेखक है; इसका तात्पर्य यह है, कि उस व्यक्ति में विशुद्ध चक्र का षष्टम् दल चैतन्य है। यह चैतन्यता प्रकृति प्रदत्त भी होती है और गुरु प्रदत्त भी। यदि कोई व्यक्ति गद्य, पद्य, दर्शन या किसी भी विषय में श्रेष्ठ लेखक बनना चाहे, तो इस दल की चैतन्यता प्राप्त कर अपनी इच्छा पूरी कर सकता है। यदि कोई लेखक है, तब भी वह इस दल को पुनः स्पन्दन प्रदान कर अपनी लेखन प्रतिभा में और अधिक निखार ला कर श्रेष्ठ एवं अद्वितीय साहित्य की रचना कर सकता है।

ऋं — विशुद्ध चक्र की ही उपलब्धि है — 'संगीत और गायन के क्षेत्र में पूर्ण आधिपत्य'। संगीत की शक्ति से प्राचीन काल से ही लोग परिचित हैं और आधुनिक युग में भी विभिन्न रागों की शक्ति को आजमाया गया है। संगीत के द्वारा मानव, देव, पशु-पक्षी, यहां तक कि पेड़-पौधों को भी वशवर्ती बनाया जा सकता है। इस दल के जाग्रत होने पर व्यक्ति को स्वतः रागों का सही ज्ञान प्राप्त हो जाता है और उसके कण्ठ में आकर्षण व सुरीलापन आ जाता है। इस चक्र के जागरण का श्रेष्ठ उदाहरण हैं 'तानसेन', जिन्होंने संगीत के माध्यम से प्रकृति को भी अपने नियन्त्रण में कर रखा था।

इस चक्र की एक और उपलब्धि है — गायन क्षेत्र में प्रवीण गन्धर्वों को बुला कर उनके गायन का श्रवण किया जा सकता है।

ॠं — इस अष्टम दल की उपलब्धि है — 'नृत्य प्रवीणता'। नृत्य की उत्पत्ति भगवान शिव के ताण्डव नृत्य से हुई है और ताण्डव नृत्य से ही विभिन्न भाव-भंगिमाओं, विभिन्न प्रकारों — भरतनाट्यम्, कुचीपुड़ी, ओडसी आदि की उत्पत्ति हुई। इस दल की सुप्त शक्ति के जाग्रत होने पर प्रत्येक नृत्य की विद्या स्वतः व्यक्ति को ज्ञात हो जाती है। इसके साथ ही साथ उसे वह क्षमता भी प्राप्त हो जाती है, जिसके माध्यम से वह अप्सराओं को बुला कर उनके नृत्य का आनन्द ले सकता है।

नृत्य में भी सभी को मुग्ध करने एवं प्रकृति को नियन्त्रित कर आनन्दप्रद वातावरण का निर्माण करने की क्षमता होती है।

लृं — विशुद्ध चक्र के इस दल की उपलब्धि है — 'अनेकों शरीर धारण करने की क्षमता', जिसमें प्रत्येक शरीर मूल शरीर की तरह ही समस्त गुणों से युक्त होता है। इस चक्र के जाग्रत होने पर व्यक्ति एक ही समय अनेक स्थानों पर विभिन्न कार्यों को सम्पन्न कर सकता है। इस चक्र की उपलब्धि का अद्वितीय उदाहरण है — भगवान श्रीकृष्ण द्वारा रासलीला के समय प्रत्येक गोपी के साथ नृत्य करना। ऐसा उन्होंने अपने मूल शरीर के ही विभिन्न रूप धारण कर किया था।

लॄं — इस दल की उपलब्धि है — 'इच्छानुसार अपने शरीर को छोटा-बड़ा करना', छोटा एक चींटी की तरह, बड़ा एक विशाल पर्वत की तरह। लंका जाते समय हनुमान ने इसी चक्र के माध्यम से सुरसा के मुख के अनुसार विशाल रूप

धारण किया और तुरन्त ही चींटी की तरह लघु रूप धारण कर उसके मुंह से निकल कर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ गए। रामायण में वर्णित यह कथा कपोल-कल्पित नहीं है, अपितु इससे सिद्ध होता है, कि हनुमान एक सिद्ध योगी व श्रेष्ठ तांत्रिक साधक थे।

एं – विशुद्ध चक्र के ग्यारहवें दल में सुप्त होती है वह शक्ति, जिसके जाग्रत होने पर व्यक्ति ब्रह्माण्ड के सूक्ष्म रहस्यों को जान लेता है, उसे पदार्थ का ज्ञान हो जाता है और उसे यह क्षमता मिल जाती है, कि वह शून्य से कोई भी पदार्थ प्राप्त कर ले, किसी भी एक पदार्थ को दूसरे में परिवर्तित कर दे, इसके साथ ही सांथ किसी पदार्थ का निर्माण क्यों और कैसे हुआ है, इस तथ्य को भी वह जान लेता है।

ऐं – मनचाहे रूप परिवर्तन की क्षमता विशुद्ध चक्र के बारहवें दल की उपलब्धि है। इस क्षमता के कारण व्यक्ति किसी अन्य नर, नारी, पशु अथवा पक्षी का रूप धारण कर सकता है। इसी क्षमता का उपयोग कर योगी एक ग्रह से दूसरे ग्रह पर जाते समय अपने स्वरूप में परिवर्तन कर लेते हैं।

ओं – आस-पास के वातावरण से प्रभावित हुए बिना व्यक्ति पूर्ण ध्यान की अवस्था प्राप्त कर ब्रह्म के दर्शन कर लेता है तथा भोजन, जल, वायु के बिना वर्षों ध्यानस्थ रह सकता है।

औं – इस दल की शक्ति जब पूर्ण स्पन्दन प्राप्त कर लेती है, तो व्यक्ति को इच्छामृत्यु की उपलब्धि होती है। व्यक्ति का अपने शरीर के प्रत्येक अंग और नाड़ी पर पूर्ण नियन्त्रण होता है, वह चाहे तो अपने हृदय की धड़कन को भी रोक सकता है।

अं – विशुद्ध चक्र की पन्द्रहवीं उपलब्धि है – पूर्ण सांसारिक सफलता। व्यक्ति को समस्त भौतिक सुख, धन, दौलत, यश, सम्मान सभी कुछ प्राप्त हो जाता है। जिस क्षेत्र में भी

चाहे, वह सर्वश्रेष्ठ बन सकता है, जैसे ज्योतिष, व्यापार, संगीत, राजनीति, अध्यात्म आदि। व्यक्ति स्वयं के जीवन में श्रेष्ठत्व तो प्राप्त करता ही है, साथ ही साथ किसी प्रकार के अभाव से घिरा नहीं होने के कारण वह समाज के लिये भी उपयोगी सिद्ध होता है, क्योंकि उसका चिन्तन सदैव लोक कल्याणार्थ कार्यों के प्रति रहता है तथा उससे सम्बन्धित कार्य ही करता है।

अः — 'सम्मोहन' विशुद्ध चक्र जागरण की एक अद्वितीय उपलब्धि है। इस दल के जाग्रत होते ही व्यक्ति का सम्पूर्ण शरीर आकर्षण युक्त हो जाता है, लोग स्वतः ही उसकी ओर आकर्षित होते हैं और उसकी आज्ञा पालन का प्रयास करते ही हैं।

सम्मोहन शक्ति प्राप्त व्यक्ति अपराधियों के विचारों को परिवर्तित कर सृजन युक्त विचार दे सकता है, मानसिक व्याधियों को समाप्त कर सकता है और जो व्यक्ति जीवन से हताश हो चुके हैं, उनमें नवजीवन का सञ्चार कर उनकी आत्म शक्ति जाग्रत कर सकता है।

आज्ञा चक्र (तृतीय नेत्र)

पंच तत्त्वों में सबसे अधिक स्पन्दन होता है 'आकाश' तत्त्व का, जो कि विशुद्ध चक्र का प्रतिनिधित्व करता है। विशुद्ध चक्र में निहित शक्ति अपने मूल स्पन्दन से अधिक स्पन्दन प्राप्त करती हुई आगे की ओर अग्रसर होती है। आकाश तत्त्व से अधिक या उच्च स्पन्दन दिव्य शक्तियों का होता है। ये दिव्य शक्तियां आज्ञा चक्र पर केन्द्रित होती हैं। जब कुण्डलिनी शक्ति विशुद्ध चक्र से आगे बढ़ती हुई आज्ञा चक्र पर पहुंचती है, तब वहां की सुप्त शक्तियों का जागरण होता है और आत्म शक्तियों का दिव्य शक्तियों से तादात्म्य स्थापित होता है।

आज्ञा चक्र को ही 'थर्ड आई' या 'दिव्य नेत्र' की संज्ञा दी गई है, साधारणतः लोग आज्ञा चक्र को ही छठी इन्द्रिय कहते हैं, जब कि सहस्रार

के चैतन्य होने पर छठी इन्द्रिय का जागरण होता है। इस चक्र के जाग्रत होने पर किसी के भी भाग्य चक्र को, कई जन्मों के उसके कर्म विशेष को फिल्म स्क्रीन पर आये हुए दृश्य के समान देखा जा सकता है।

आज्ञा चक्र श्वेत कमल के समान होता है। इन दोनों दलों का तात्पर्य सिर्फ दो उपलब्धियां नहीं हैं, अपितु समस्त सिद्धियों में पूर्णता अर्थात् ऋणात्मक एवं धनात्मक सभी शक्तियों की प्राप्ति है। इस चक्र का मूल बीज मंत्र 'नं' है। इसके दोनों दल क्रमश: 'सूर्य' अर्थात् अत्यन्त दाहकता युक्त एवं 'चन्द्र' अत्यन्त शीतलतायुक्त गुणों से सम्पन्न होते हैं। इनकी उपलब्धियां निम्न हैं –

हं – इस दल की शक्ति के जागरण के कारण व्यक्ति के नेत्रों में अत्यन्त तीक्ष्ण ऊष्मा शक्ति आ जाती है, जिसके कारण व्यक्ति किसी भी वस्तु को क्षण में भस्म कर सकता है, इतनी अधिक तीव्रता, तेजस्विता आ जाती है, कि वह चाहे तो ऊंचे से ऊंचे पर्वतों तथा गहरे समुद्रों तक का अस्तित्व पल-भर में समाप्त कर दे। इसी शक्ति के करण जब राम ने क्रोध युक्त हो लंका जाते समय समुद्र को देखा, तो समुद्र घबरा कर प्रकट हुआ और क्षमा याचना की। इसी तृतीय नेत्र की ज्वाला से भगवान शंकर ने दक्ष का यज्ञ विध्वंस किया और कामदेव को भस्म किया।

क्षं – आज्ञा चक्र के द्वितीय दल के जागरण के कारण सृजनात्मक क्षमता प्राप्त होती है। व्यक्ति के अन्दर करूणा, प्रेम और ममत्व का अभ्युदय होता है, जिसके कारण वह दु:खी जीवों को सुख और शान्ति प्रदान करता है। मात्र दृष्टिपात के द्वारा वह निर्धन को सम्पन्न, असफल को सफल बना सकता है। इसी शक्ति के कारण व्यक्ति में गुरुत्व की गरिमा आ जाती है। वह स्वयं तो पूर्ण बनता ही है, दूसरों को भी पूर्ण बना सकता है। किसी भी सिद्धि, साधना को वह दूसरों को देने में समर्थ बन जाता है।

सहस्रार

आज्ञा चक्र के जाग्रत होने के बाद कुण्डलिनी शक्ति ऊपर की ओर उठती हुई मस्तिष्क भाग में पहुंचती है। सिर के अन्दर सहस्र नाड़ियों का संगुम्फित स्वरूप होता है, जिसे 'सिक्स्थ सेंस' अथवा 'छठी इन्द्रिय' कहा जाता है।

जब कुण्डलिनी शक्ति इस प्रदेश में पहुंचती है, तो सहस्रार में सुप्त शक्तियों के स्पन्दन युक्त होने से अमृत झरने लगता है, जिसके कारण मानव का सम्पूर्ण शरीर दैदीप्यमान हो उठता है और उसके सिर के चारों तरफ एक आभामण्डल का निर्माण हो जाता है, ठीक वैसा ही जैसा राम, कृष्ण, ईसा मसीह आदि के चित्र में दिखाया जाता है।

सहस्रार चक्र 'गुरु तत्त्व' प्रधान होता है। इस चक्र का मूल बीज मंत्र 'ॐ' है। इसमें निहित शक्ति की अनगिनत उपलब्धियां हैं अर्थात् व्यक्ति के लिये कुछ भी असम्भव नहीं होता है, वह स्वयं अपने विचार, मन, वाणी और कर्म के द्वारा देवतुल्य बन जाता है। प्रकृति उसके द्वारा दी गई आज्ञा के पालन के लिये लालायित रहती है।

समाधि की जो प्रक्रिया मूलाधार चक्र से प्रारम्भ होती है, वह वहीं आकर पूर्णता प्राप्त करती है। आज्ञा चक्र जागरण तक वह गुरु रहता है, किन्तु सहस्रार जाग्रत होन पर वह सद्गुरु, जगद्गुरु हो जाता है; फिर उसका चिन्तन विश्व के प्रत्येक प्राणी की शुभकामना के लिये होता है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उस व्यक्ति के अन्दर पूर्णता के साथ स्थापित हो जाता है।

सहस्रार जाग्रत व्यक्ति किसी भी व्यक्ति की कुण्डलिनी को जाग्रत कर सकता है, अपने समकक्ष बना सकता है।

इस चक्र जागरण के बाद व्यक्ति निरन्तर ब्रह्माण्ड के रहस्यों में निमग्न, प्रकृति के बन्धन से परे, कर्म बन्धन से विमुक्त हो, जीवन युक्त अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

8

साधना में सफलता हेतु शक्तिपात दीक्षा'

गुरुत्वं शरण्यं शरण्यं त्वमेकम्

शिष्य ही तो परिचय होता है
इस जगत में अपने गुरु का . .
और इस गुण से सम्पन्न वह तभी हो सकता है
जब अपने आपको
गुरु चरणों की शरण में अर्पित कर दे।
गुरु शरण में जाते ही गुरु अपने शिष्य को
एक मिट्टी के लौंदे से आगे बढ़ा कर
शीतलतायुक्त घड़े में
परिवर्तित कर देता है।
इस क्रिया को
सम्पन्न करने के लिये
वह बाह्य रूप से
आघात करता है,
— लेकिन
आन्तरिक रूप से
अपनी
कृपा का
अवलम्बन भी
प्रदान करता है . . .
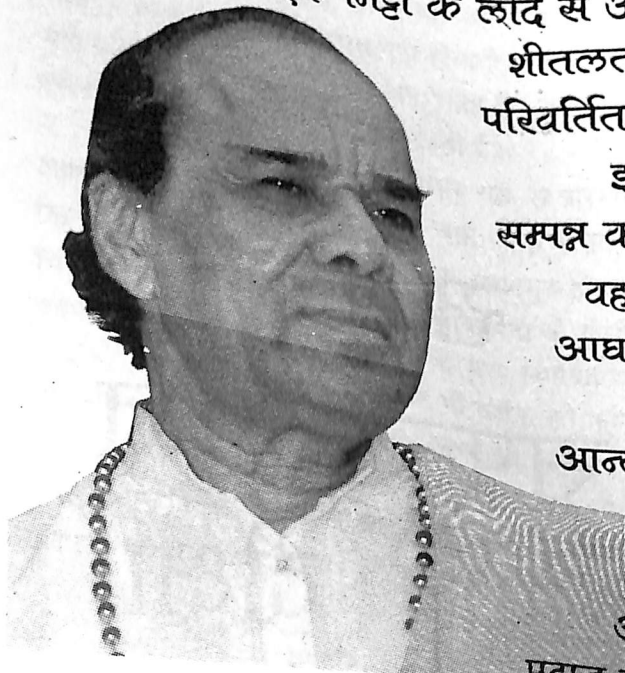
आपके सम्मुख अभी मैंने कुण्डलिनी के स्वरूप की व्याख्या की, साथ ही कुण्डलिनी ऊर्जा से परिचित कराया और यह भी बताया, कि इस ऊर्जा को यदि क्रियाशील कर लिया जाय, तो इससे क्या उपलब्धियां मानव को प्राप्त होती हैं। अब आपके सामने प्रश्न उठ रहे हैं, कि –

- इस कुण्डलिनी शक्ति को कैसे जाग्रत किया जाय ?
- क्या यह शक्ति स्वतः जाग्रत हो सकती है?

स्वाभाविक हैं आपके मन में उठ रहे ये प्रश्न। कुण्डलिनी शक्ति कुछ व्यक्तियों में, लगभग प्रत्येक व्यक्ति में आंशिक रूप से प्रकृति के द्वारा या यों कहें, कि पूर्व जन्म के संस्कारों के कारण जाग्रत होती ही है। कुण्डलिनी शक्ति ही वह ऊर्जा है जिसके कारण यह मानव शरीर विभिन्न कलाओं से युक्त बनता है। कोई व्यक्ति यदि बहुत अच्छा वैज्ञानिक है, तो निश्चित रूप से बौद्धिक पक्ष का प्रतिनिधित्व करने वाले 'दल' की शक्ति स्पन्दन युक्त होगी और स्पन्दित होने के कारण ही वह एक सफल वैज्ञानिक बन सका।

इसी प्रकार स्वामी हरिदास,तानसेन, चैतन्य, बाल गन्धर्व आदि जितने भी गायक हैं, उन सभी के शरीर में स्थित विशुद्ध चक्र का सातवां दल जाग्रत होता है, जो संगीत (गायन) का गुण समाहित किये होता है, जिसके कारण ये लोग अच्छे गायक बन सके। इन लोगों के व्यक्तिगत जीवन में यदि आप झांक कर देखें, तो ये नित्य संगीत की आराधना करते थे और प्रायः जब ये छोटे-से

बच्चे थे, लगभग चार-पांच वर्ष के, तभी से इनके द्वारा संगीत की आराधना प्रारम्भ करा दी गई।

ऐसा करने के पीछे पूर्ण आध्यात्मिक कारण है। बच्चा जब छोटा होता है, तो उसका मन, उसकी आत्मा बिलकुल निर्मल होती है, उस समय वह जो भी आराधना करेगा, वह सफल होती है। हां! उसके घर के बड़े लोगों का, विशेषकर उसके माता-पिता का यह दायित्व बनता है, कि उस बच्चे को नियमित रूप से आराधना करने का अभ्यास डालें। नियमित अभ्यास करते रहने के कारण जिस कार्य के लिये बच्चा अभ्यास, आराधना करता रहता है, उससे सम्बन्धित चक्र का दल धीरे-धीरे आघात प्राप्त होते रहने के कारण स्पन्दित होना प्रारम्भ कर देता है, परिणामतः एक समय ऐसा आता है जब वह दल पूर्ण स्पन्दनायुक्त हो जाता है और वह व्यक्ति उस कार्य में, उस कला में सिद्धहस्त बन जाता है।

कभी-कभी ऐसा भी देखने में आता है, कि कोई प्रतिभा किसी व्यक्ति में अचानक उत्पन्न हो गई और उस प्रतिभा के कारण वह व्यक्ति अत्यधिक विख्यात हो गया। इस सम्बन्ध में एक उदाहरण देता हूं – फ्रांस के ज्योतिषी '**मिशैल गेश**' का, यह व्यक्ति ज्योतिष का क, ख, ग नहीं जानता था, फिर भी इसके द्वारा की गई भविष्यवाणियां सही उतरीं। अभी कुछ वर्ष पूर्व उसकी मृत्यु हुई है।

प्रारम्भ में मिशैल दीवारों पर रंग-रोगन करने वाला साधारण-सा कारीगर था। एक दिन वह सीढ़ी पर चढ़कर एक ऊंची दीवार पर रंग लगा रहा था। अचानक सन्तुलन बिगड़ने के कारण वह सीढ़ी से गिरा और उसके सिर पर चोट लग गई, लेकिन वह जब किसी तरह अपने आपको संभाल कर उठा, तब उसने देखा, कि जिस व्यक्ति के टकराने से उसकी सीढ़ी का सन्तुलन बिगड़ा और वह गिरा; वह व्यक्ति बहुत तेजी से भागता जा रहा है और तभी उसे देखकर मिशैल को अहसास हुआ, कि वह व्यक्ति खूनी है, एक बहुत बड़ा अपराधी है।

उस क्षण के बाद से मिशैल का जीवन परिवर्तित हो गया और वह एक साधारण मनुष्य से ऊपर उठकर एक विख्यात ज्योतिषी बन गया।

उसके सिर पर लगी चोट के कारण उसके शरीरस्थ अनाहत चक्र का भविष्य दर्शन सम्बन्धी दल जाग्रत हो गया, जिसके कारण वह एक सफल भविष्यवक्ता बन सका। यदि उसका कोई अन्य शक्ति सम्पन्न दल जाग्रत हो गया होता, तो वह उस कला में प्रवीण हो जाता।

इस घटना में सिर्फ एक ही क्रिया हुई, उसके चेतन बिन्दु पर आघात पहुंचा अर्थात् उसके सिर में स्थित एक बिन्दु पर शक्ति का पात हुआ, जिसके कारण उसकी कुण्डलिनी शक्ति की ऊर्जा क्रियाशील हुई, जिसने अनाहत चक्र को जाग्रत कर दिया।

मेरी इस बात को पढ़कर कहीं आप अपना सिर दीवार में मत दे मारियेगा, कि बस एक आघात पहुंचाने की बात है न, लो! मैं खुद कर लेता हूं। यदि आपने अज्ञानतावश ऐसा किया भी, तो निश्चय जानिये, कि आपको नुकसान ही होगा। यह भी सम्भव है, कि कुण्डलिनी की शक्ति क्रियाशील होकर किसी गलत दिशा में मुड़ जाये और आप विक्षिप्त हो जाएं अथवा आपका कोई अंग कार्य करना बंद कर दे।

— इतना सहज नहीं है कुण्डलिनी जाग्रत कर लेना। कुण्डलिनी जागरण की क्रिया सद्गुरु के द्वारा ही सम्भव हो सकती है, एक ऐसे गुरु के द्वारा जिसकी अपनी स्वतः की कुण्डलिनी जाग्रत हो, जिसने कुण्डलिनी जागरण के एक-एक आयाम को सूक्ष्मता से समझा हो, परखा हो और क्रियान्वित किया हो — ऐसा ही गुरु शिष्य की कुण्डलिनी जाग्रत कर सकता है।

ऐसा व्यक्ति जो किताबों में पढ़ कर कुण्डलिनी के स्वरूप और उसकी क्रियाओं के बारे में रट लेता है और पुस्तक के आधार पर ही व्यक्ति के शरीर में कौन सा चक्र कहां पर स्थित होता है, इसका ज्ञान प्राप्त कर अपने आपको सिद्ध गुरु बताने का प्रयास करता है, वह पाखण्डी होता है, अज्ञानी होता है। ये लोग सिर्फ एक स्वांग ही रचते हैं, दूसरों को प्रभावित करने के लिये। बाहर से इनकी क्रियाओं को देखकर प्रत्येक व्यक्ति यही समझता है, कि वाह! कितने सिद्ध योगी हैं, एक पल में ही कुण्डलिनी जगा दी और भगवान के दर्शन करा दिये।

इनकी आंतरिक क्रियाओं का आपको बोध नहीं है। ऐसे लोग क्या करते हैं, कि एक व्यक्ति गुरु बन जाता है और दो-चार लोगों के अथवा अपने परिवार के लोगों को कुछ बातें सिखा देते हैं; भीड़-भाड़ वाले स्थान पर बैठ जाते हैं या बहुत ढेर सारी उपाधियों को जोड़-जोड़ कर अपने नाम के बैनर बनवा कर जोर-शोर से प्रचार करने लगते हैं और जब जिज्ञासुओं की भीड़ एकत्र हो जाती है, तो एक व्यक्ति गुरु बन जाता है और शेष व्यक्ति भीड़ का अंग . . . फिर भीड़ में से ही वह बाहर आ कर बोलता है – 'मेरी कुण्डलिनी जगा दो।' गुरु बना व्यक्ति उसको बुलाकर उसके सिर पर हाथ रख कर कुछ विचित्र से हाव-भाव प्रदर्शित करता है . . . और अकस्मात ही शिष्य बना व्यक्ति कांपने लगता है, चीखने लगता है या अन्य कोई हरकत करने लगता है, भीड़ में बाकी जो दो लोग बैठे होते हैं वे जोर-जोर से आवाज लगाते हैं – श्री. . .श्री 1008 . . . . की जय . . . . . और पूरी जनता जयकारा लगाने लगती है।

निश्चित रूप से दो चार लोग ऐसे निकल आते हैं, जो कि कुण्डलिनी जागरण की कामना से उसके पास आते हैं और वह गुरु बना व्यक्ति अपने अज्ञान से उन्हें ठग कर उन्हें और अज्ञानी बना देता है।

मेरे पास एक हलवाई आया और बोला – गुरु जी! इतनी बड़ी-बड़ी मिठाइयों की दुकानें खुल गयी हैं, कि मेरी दुकान बंद सी हो गयी है। पूरे परिवार का भरण-पोषण करना कठिन हो गया है। कोई ऐसा धांसू उपाय बताइये, कि ज्यादा कुछ मेहनत भी ना लगे और पैसे की कोई कमी भी ना रहे।

मैंने हंसते हुए कहा – तू गुरु बन जा और अपनी पत्नी, बच्चों को बोल, कि तेरी आरती उतारा करें। किसी भीड़-भाड़ वाले स्थान पर बैठ कर ऐसा करना। निश्चित रूप से दो-चार दिन में ही तेरी इच्छा पूरी हो जायेगी।

मेरी बात सुनकर वह चला गया और सच मानिये, उसने ऐसा ही किया। एक भीड़ वाले स्थान पर बैठ गया और पत्नी आरती उतारने लगी। दो-चार लोग आये, पैसे चढ़ाए, एक ने नारियल चढ़ाया, नारियल बेचा तो छः रुपये मिले। फिर प्रचार कर दिया, कि नारियल चढ़ाने से इच्छा पूरी होती है,

लोग नारियल चढ़ाते। शाम को उसका बेटा नारियल बेचकर दो-चार सौ रुपये रोज ले आता। आराम से जीवन बीत रहा है।

एक दिन वह मेरे पास आया और बोला- — 'आपकी कृपा है।'

. . . कमी नहीं है ऐसे गुरुओं की और ऐसे भक्तों की।

भारत के लोग शुरू से ही धर्मप्रिय रहे हैं और ज्ञान की खोज में अलग-अलग विधियों को अपनाते रहे हैं, ऐसे लोग जिज्ञासु कहे जाते हैं . . क्योंकि व्यक्ति को जब तक सद्‌गुरु नहीं मिल जाते, विभिन्न सम्प्रदायों, विभिन्न साधु-सन्तों के पास भटकता रहता है, ठीक उस प्यासे मृग की तरह जो रेगिस्तान में भटकते हुए पानी की तलाश में दूर दिख रही मृग-मरीचिका को पानी का सरोवर समझ कर उसके लिये दौड़ता ही रहता है।

— प्यासे मृग की तरह आप भी उन साधुओं को और अज्ञानी व्यक्ति को गुरु मान कर मृग-मरीचिका के भ्रम में दौड़ते जा रहे हैं . . . हासिल कुछ भी नहीं कर पा रहे हैं। इस तरह भागते-दौड़ते ही अधिकांश व्यक्तियों का जीवन समाप्त हो जाता है, मुश्किल से दो-चार प्रतिशत व्यक्ति ऐसे निकल पाते हैं, जिन्हें सद्‌गुरु मिल जाते हैं और इनमें से भी मुश्किल से दो प्रतिशत व्यक्ति ही ऐसे होते हैं, जो गुरु का सान्निध्य प्राप्त कर उनसे दीक्षा और वह भी शक्तिपात युक्त दीक्षा प्राप्त कर लेते हैं।

— क्योंकि शक्तिपात दीक्षा देना और लेना दोनों ही अत्यधिक कठिन क्रिया होती है। शक्तिपात एक अत्यन्त श्रम साध्य एवं अति सूक्ष्म क्रिया है। शक्तिपात करते समय गुरु अपने अन्दर निहित तपस्या के कुछ अंश को, शिष्य की योग्यता को देखते हुए, उसके शरीर के अन्दर प्रवाहित करता है। वह तपस्या ऊर्जा बहुत ही शक्तिशाली होती है, ठीक उतनी शक्तिशाली, जितनी कि 440 वोल्ट का करण्ट।

थोड़ी सी भी विद्युत ऊर्जा किसी के शरीर में प्रवेश कर जाती है, तो उस व्यक्ति की स्थिति उसके द्वारा संभाले नहीं संभलती है, ठीक इसी प्रकार गुरु के द्वारा शक्तिपात करने पर शिष्य के शरीर की भी यही दशा बननी सम्भव होती है। अतः गुरु . . . यदि वह सद्‌गुरु है और उसे वास्तव में शक्तिपात की क्रिया का ज्ञान है, तो पहले अपने शिष्य के शरीर को 'गुरु

दीक्षा के द्वारा गुरु मंत्र प्रदान करके उसे नियमित रूप से जप करने को कहते हैं, जिसके प्रभाव के कारण व्यक्ति का शरीर गुरु प्रदत्त शक्तिपात को सहन करने की योग्यता प्राप्त कर लेता है, फिर गुरु उसकी कुण्डलिनी शक्ति को शक्तिपात के द्वारा जाग्रत कर उसकी मनोकामना से सम्बन्धित दल को स्पन्दन प्रदान कर देते हैं।

यहाँ पर आप ऐसा सोच सकते हैं, जादू की छड़ी घुमायी और कद्दू रथ बन गया, ऐसा नहीं होता है। गुरु शिष्य के अन्दर निहित कुण्डलिनी शक्ति को चैतन्य कर देते हैं, पहले वह दल धीरे-धीरे एक नियमित गति से स्पन्दित होता हुआ अपने मूल स्पन्दन को प्राप्त कर लेता है और उसी प्रकार उसकी इच्छित मनोकामना पूरी हो जाती है। आप कह सकते हैं, कि आज की इस तीव्र गति से चलने वाले युग में पहले धीरे फिर तेज की क्रिया कहां तक कारगर होगी? इसके लिये मैं सिर्फ आपसे यही कहूंगा, कि आप कार में बैठिये और एक सेकेण्ड में ही कार की रफ्तार सौ कि.मी./घण्टा के हिसाब से करके दिखलाइये।

क्या आप ऐसा कर सकते हैं? निश्चित रूप से आपका उत्तर 'नहीं' होगा, क्योंकि कार की रफ्तार क्रमशः बढ़ायी जा सकती है।

जब एक निर्जीव वस्तु, जिसका निर्माण मानव ने किया है, उसकी रफ्तार क्रमशः बढ़ायी जाती है, फिर मानव के शरीर में निहित ऊर्जा को अचानक कैसे बढ़ाया जा सकता है? यदि बढ़ा भी दें, तो आप उस झटके को, ऊर्जा शक्ति की तीव्रता को सहन नहीं कर सकेंगे। इसीलिये इस ऊर्जा को सद्गुरु धीरे-धीरे बढ़ाता हुआ पूर्ण स्पन्दन प्रदान करने की क्रिया सम्पन्न करता है।

प्रत्येक व्यक्ति के शरीर में ईश्वर ने अनेक सम्भावनाएं दे रखी हैं, आवश्यकता है इन्हें समझने की और इसमें व्याप्त शक्ति का सदुपयोग करने की। यदि व्यक्ति इनको सूक्ष्मता और गहराई के साथ ले और अपने शरीर में निहित सभी शक्तियों को जाग्रत कर अपने नियन्त्रण में कर ले, तो इस ब्रह्माण्ड में ऐसा कोई भी कार्य नहीं है, जो उसके लिये असम्भव हो। यहां तक, कि वह

एक नयी सृष्टि का निर्माण करने की क्षमता भी प्राप्त कर लेता है। इसी क्षमता के आधार पर ही ऋषि विश्वामित्र ने त्रिशंकु के लिये एक नये स्वर्ग की रचना प्रारम्भ कर दी थी।

अभी तक मैंने शरीर में स्थित कुण्डलिनी शक्ति में निहित ऊर्जा और उसकी उपलब्धियों के साथ ही साथ मानव शरीर में यह कहां स्थित है, इस बात को स्पष्ट किया। यहां एक बात यह ध्यान देने योग्य है, कि कुण्डलिनी के चक्र शरीर के जिस भाग में स्थित हैं, वहां पर शक्तिपात करके [जो गुरु द्वारा दृष्टिपात, स्पर्श (कर-स्पर्श अथवा शब्द-स्पर्श) द्वारा किया जाता है] चक्र को जाग्रत किया जाता है।

इसके साथ ही प्रत्येक मानव शरीर में जहां आज्ञा चक्र स्थित है, अर्थात् दोनों भ्रूमध्य में, जहां भगवान शिव की तीसरी आंख चित्रों में प्रदर्शित की गयी है, उसी स्थान पर प्रत्येक व्यक्ति की तीसरी आंख (आज्ञा चक्र) स्थित होती है। यह आज्ञा चक्र मात्र दो दलों से निर्मित होने के साथ ही साथ अनन्त उपलब्धियों को प्रदान करने की क्षमता रखता है। इसी आज्ञा चक्र में पूरी कुण्डलिनी को नियन्त्रित करने के 'प्वाइण्ट्स' होते हैं।

जिस प्रकार किसी उत्सव पर मकान को असंख्य बल्बों की कतार से सजाया जाता है और उन सभी का नियन्त्रण एक या दो स्विच प्वाइण्ट्स के द्वारा किया जाता है, ठीक इसी प्रकार मानव शरीर में स्थित कुण्डलिनी शक्ति को नियन्त्रित करने के लिये आज्ञा चक्र में स्थित होते हैं कुछ स्विच, कुछ प्वाइण्ट्स; जिन्हें सद्गुरु व्यक्ति की आवश्यकतानुसार 'ऑन' कर सम्बन्धित चक्र और उस चक्र के किसी दल विशेष की शक्ति को स्पन्दित कर देता है, जिसके कारण व्यक्ति की इच्छा पूर्ण हो जाती है।

आज्ञा चक्र में इस प्रकार के कुल बत्तीस ज्योतिर्बिन्दु (प्वाइन्ट्स) होते हैं, जिन्हें 'शक्ति बिन्दु' भी कहा जाता है। इनमें से सोलह बिन्दु सम्पूर्ण भौतिकता प्रदायक अर्थात् इस संसार में व्यक्ति को सम्मान एवं सम्पूर्ण सम्पन्नता सहित जीवन-यापन करने के लिये जिस किसी भी चीज की आवश्यकता होती है, उन सभी वस्तुओं को उपलब्ध कराने की

क्षमता इन सोलह बिन्दुओं में निहित है – और शेष सोलह बिन्दु पूर्ण आध्यात्मिकता प्रदान करने की क्षमता से युक्त होते हैं – अध्यात्म का पहला सोपान – ध्यांन से लगाकर अन्तिम सोपान – ब्रह्मत्व प्राप्ति, सिद्धाश्रम प्रप्ति तक।

आप और भी अच्छी तरह से समझ सकें, अतः इन दोनों की कुछ विशिष्ट उपलब्धियों को जो विभिन्न बिन्दुओं के द्वारा प्राप्त होना सम्भव है, उनका उल्लेख क्रमवार रूप से कर रहा हूं –

क्रम	भौतिक बिन्दु	आध्यात्मिक बिन्दु
1.	स्वास्थ्य	मानसिक सुख
2.	पैतृक धन	सन्तुष्टि
3.	पूर्ण सौन्दर्य प्राप्ति	ध्यान
4.	पूर्ण पौरुष प्राप्ति	गुरुत्व प्राप्ति
5.	मकान	आत्म–प्रकाश
6.	पुत्र	उन्मुक्त अवस्था
7.	विद्या	निर्विचार मन
8.	शत्रु निवारण	पूर्ण शिष्यत्व समर्पण
9.	विवाह	समाधि
10.	पति–पत्नी सुख	सिद्धि, सफलता
11.	अकाल मृत्यु निवारण	कुण्डलिनी जागरण
12.	भाग्योदय	सहस्रार दर्शन
13.	राज्य सम्मान	विराट् साक्षात्कार
14.	आय	समस्त लोक दर्शन
15.	ऐश्वर्य	परमहंस अवस्था
16.	मनोवाञ्छित सफलता	सिद्धाश्रम

जिस प्रकार शिष्य के ललाट में बत्तीस ज्योतिर्बिन्दु होते हैं, ठीक उसी प्रकार गुरु के अंगुष्ठ में भी बत्तीस बिन्दु होते हैं, जिन्हें 'शिव बिन्दु' कहा जाता है। इन बिन्दुओं में भी उपरोक्त उपलब्धियां निहित होती हैं। शिष्य के आज्ञा चक्र में स्थित बिन्दुओं में प्राप्त करने की क्षमता होती है और गुरु के अंगुष्ठ में स्थित बिन्दुओं में देने की क्षमता निहित होती है।

जब कोई शिष्य अपनी कोई मनोकामना, जैसे 'ऐश्वर्य' प्राप्ति की भावना लेकर गुरु के पास आता है, तो गुरु 'शिष्य' के ललाट में स्थित ऐश्वर्य वाले बिन्दु को अपने अंगुष्ठ के ऐश्वर्य बिन्दु से जोड़ देते हैं और अपनी तपस्या ऊर्जा को उस विशेष बिन्दु के माध्यम से शिष्य के शरीर में प्रवाहित कर, उस इच्छा से सम्बन्धित दल को स्पन्दित कर देते हैं . . . और इस प्रकार शक्तिपात प्रदान कर शिष्य की मनोकामना पूर्ण होने हेतु मार्ग प्रशस्त कर देते हैं।

— अत्यधिक सावधानी और पूर्ण सतर्कता के साथ यह क्रिया सम्पन्न की जाती है, क्योंकि जरा सी भी चूक से कोई अन्य बिन्दु, कोई अन्य दल स्पन्दित हो गया या शक्ति पूर्णता के साथ उस दल विशेष पर प्रहार कर स्पन्दित नहीं कर सकी अथवा शक्ति किसी अन्य दिशा में मुड़ गई, तो लाभ के स्थान पर हानि की भी सम्भावना रहती है। इसीलिये मैं बार-बार यह बात स्पष्ट कर रहा हूं, कि दीक्षा देना एक सहज क्रिया नहीं है, ऐसा नहीं है, कि आप अपने अंगुष्ठ को किसी के ललाट पर रखकर उसके चक्र को जाग्रत कर लेंगे।

— इस विशिष्ट क्रिया का ज्ञान किसी विशिष्ट महापुरुष अथवा सद्गुरु को ही ज्ञात होता है, क्योंकि वे अपने शरीरस्थ कुण्डलिनी को पूर्ण जाग्रत करते ही हैं साथ ही साधना की अत्यधिक विशिष्ट एवं क्लिष्टतम् प्रक्रियाओं को अपनाकर ही अपने अंगुष्ठ में स्थित एक-एक कर बत्तीसों बिन्दुओं को जाग्रत कर इतना क्षमतावान बना देते हैं, कि जिसके द्वारा वे शिष्य में अपनी तपस्यात्मक ऊर्जा के प्रवाह को प्रदान कर सकें।

शिष्य को शक्तिपात प्रदान करते रहने से गुरु के अन्दर निहित शक्ति का ह्रास होने लगता है, क्योंकि शिष्य के शरीर में व्याप्त जन्म-जन्मान्तरीय

दोषों के कारण ही उसके जीवन में अपूर्णता रहती है। शिष्य को पूर्णता देने में एक साथ ही गुरु को दो कार्य सम्पन्न करने पड़ते हैं —

1. शिष्य के दोषों को अपने ऊपर लेना।
2. अपने तपस्यांश को शिष्य को देना।

इन दोनों क्रियाओं में गुरु की तपस्या का ह्रास होता है। अतः गुरु को नित्य विशिष्ट साधना क्रम को अपनाकर अपनी तपस्या ऊर्जा को बढ़ाना पड़ती है और शिष्य के दोषों को समाप्त करना पड़ता है। यदि गुरु शिष्य के दोष को साधना और तपस्या ऊर्जा द्वारा भस्म नहीं करे, तो उसे स्वयं उन दोषों को भोगना पड़ती है।

कभी-कभी शिष्य को उन दुःखों की अनुभूति गुरु करवाते हैं, जिससे शिष्य की चेतना सुप्त न हो; जहाँ साधना क्रम में उसका शरीर रोग के कारण अवरोध उत्पन्न करता है, उस कष्ट को गुरु स्वयं अपने ऊपर लेकर उसे खुद भोगते रहते हैं।

यही कारण है, कि अनेक महापुरुषों को रोगग्रस्त व शारीरिक रूप से संत्रस्त देखा जाता है। श्री रामकृष्ण परमहंस का स्वयं कोई दोष नहीं था अपितु उन्होंने अपने एक शिष्य के दोष को, पाप कर्म को अपने ऊपर ले लिया था, जिसके कारण उन्हें गले के कैंसर जैसे रोग का दारुण कष्ट भोगना पड़ा।

सद्गुरुदेव जब किसी शिष्य पर शक्तिपात की क्रिया सम्पन्न करते हैं तब उसे सिर्फ यही क्षमता मिलती है, कि वह अपने कार्य को सहजता से पूर्ण कर सके या उसका कोई शीघ्र पूरा हो जाय। शक्तिपात प्राप्त करने का तात्पर्य यह नहीं है, कि आप स्वयं गुरु बन गये। क्योंकि एक बार गुरु ने आपके ललाट को अपने अंगूठे से स्पर्श जो कर दिया है।

सद्गुरु चाहे तो शिष्य को अपने समान बना सकता है, किन्तु प्रत्येक शक्तिपात प्राप्त शिष्य इस सामर्थ्य से युक्त नहीं होता है, कि वह किसी अन्य व्यक्ति को शक्तिपात प्रदान कर सके — क्योंकि शक्तिपात से आगे की क्रिया होती है, 'दिव्यपात' और 'ऊर्ध्वपात' जिनको प्राप्त करने के उपरान्त ही जब गुरु शिष्य को

कहे, कि अब तुम समर्थ हो गये हो किसी भी योग्य व्यक्ति को शक्तिपात प्रदान करने के लिये, तब उस व्यक्ति में गुरु के सदृश क्षमता आ पाती है, तब वह सद्गुरु की श्रेणी में खड़ा हो पाता है।

सद्गुरु में क्षमता होती है, कि वह अपने शिष्य को स्पर्श कर सोना बना दे और उससे भी आगे बढ़कर पारस बना दे, किन्तु पारस बने शिष्य में यह क्षमता नहीं होती, कि वह किसी अन्य को पारस बना दे, वह सोना तो बना सकता है, किन्तु पारस बनाने की क्षमता उसमें नहीं होती।

सद्गुरु चाहे तो शिष्य में वह क्षमता दे सकता है, जिससे वह अपने सदृश अर्थात् स्वयं पारस है तो दूसरे को भी पारस बना सके। ऐसी क्षमता प्रदान करने से पूर्व गुरु, शिष्य की अनेक कठोरतम परीक्षाएं लेता है और बहुत मुश्किल से एक या दो शिष्य ऐसे होते हैं, जो इन परीक्षाओं में सफल होते हुए उस स्थान पर पहुंच पाते हैं, जहां पहुंच कर शिष्य पारस बनाने की क्षमता अर्थात् स्वयंवत् दूसरों को बनाने की क्षमता प्राप्त कर लेता है।

मैं इसीलिये अपने प्रवचनों में, अपने साहित्य में बार-बार यह बात दोहराता हूं, कि गुरु तो मिल सकते हैं, किन्तु सद्गुरु का मिलना कठिन है।

अभी मैं आपके सामने शक्तिपात के मुख्यतः कितने भेद होते हैं और इन्हें प्रदान करने हेतु किन क्रियाओं का उपयोग करते हैं, इस बात को पूर्णता के साथ थोड़े ही शब्दों में स्पष्ट कर रहा हूं, जिससे आपका मानस भ्रमित न हो, जिससे आप शक्तिपात क्रिया प्राप्त करते समय स्पष्ट हो सकें, जिससे आपको ज्ञात हो सके, कि आपको शक्तिपात किस क्रिया द्वारा प्राप्त हुआ है?

कुछ लोगों के मन में यह संशय उत्पन्न होता है, कि गुरु जी ने उस व्यक्ति के ललाट पर दो-तीन मिनट तक हाथ रखा और मुझको दो पल में ही खिसका दिया।

ऐसी बात नहीं होती, कि सद्गुरु किसी को खिसका दें, क्योंकि उनके द्वारा जो भी क्रिया होती है वह पूर्णता के साथ ही होती है, वे अधूरा कार्य छोड़ते ही नहीं हैं। सद्गुरु यह बात अच्छी तरह जानते हैं, कि किस व्यक्ति को कितनी मात्रा में शक्तिपात करना है और कितनी तीव्रता के साथ देना है।

बहुत पहले मेरे पास एक व्यक्ति आया और बोला – मैं आपका शिष्य बनना चाहता हूं।

मैंने एक-दो दिन उसे टाला, फिर भी वह रोज सुबह आता और जोधपुर में ऑफिस के सामने खड़ा रहता। मैं मिलता नहीं था उससे, फिर भी वह खड़ा रहता, न कहीं आता न जाता और कुछ खाता भी नहीं था, बहुत करता तो पास में रखे घड़े से पानी पी लेता। तीन-चार दिन बाद मैंने उसे बुलाया और पूछा – ऐसा क्यों करता है तू?

वह बोला – ज्यादा कुछ नहीं आप अपना शिष्य बना लो, दीक्षा देकर एक बार शक्तिपात कर दो।

मैंने सोचा, कि इतना दृढ़ निश्चय वाला व्यक्ति है, चलो, दीक्षा दे ही देता हूं . . . और शक्तिपात की अत्यन्त मन्द क्रिया द्वारा दीक्षा दे दी। कुछ दिनों बाद वह घर जाने की आज्ञा लेकर चला गया और वापिस लौट कर नहीं आया। समय के प्रवाह के साथ मेरा ध्यान भी उसकी तरफ से हट गया।

सन् 1980 में किसी कार्यवश अमरीका गया। काम पूरा कर मैं न्यू जर्सी के मार्केट में घूम रहा था। तभी एक दुकान के बोर्ड पर मेरी नजर पड़ी, जिस पर लिखा था –

'कुण्डलिनी जागरण गारण्टी के साथ' मात्र पचास डॉलर में आप अपनी कुण्डलिनी जाग्रत करायें और तुरन्त ब्रह्मानन्द प्राप्त करें।

मैं सोच में पड़ गया . . . आज तक मैं भी इतनी तेज गति से आगे नहीं बढ़ सका, फिर अमेरिका में ऐसा कौन व्यक्ति है, जो इतनी गारण्टी के साथ सिर्फ पचास डॉलर में कुण्डलिनी जाग्रत कर दे रहा है?

मैं अपनी जिज्ञासा रोक नहीं पाया और अन्दर जाकर कुण्डलिनी जाग्रत कराने की रसीद ले ली। जब अन्दर पहुंचा तो देखा – एक व्यक्ति लम्बी सी दाढ़ी रखे हुए, बड़ा तिलक लगाये हुए, गेरुआ वस्त्र पहन कर बैठा है। मैं आगे गया और जाकर उसके सामने रखी कुर्सी पर बैठ गया।

पता नहीं क्यों मुझे देखकर वह थोड़ा सा घबराया, किन्तु संभल कर अपने भक्तों को, अपने सेवकों को यह कहकर बाहर भेज दिया, कि जब तक मैं नहीं कहूंगा, तुम लोग अन्दर मत आना।

मैं सोच में पड़ गया — क्या बात है, कुछ समझ में नहीं आ रहा है। मैं थोड़ा और सावधान होकर बैठ गया, कि पता नहीं किस क्रिया द्वारा यह कुण्डलिनी जागरण करेगा, कहीं तिब्बती विधि का उपयोग तो नहीं करने वाला है, क्योंकि उसमें जहां सिर में चोटी रखी जाती है, उस भाग में सोने या चांदी की कील (जो विशिष्ट मंत्रों से अभिमंत्रित एवं अनेक औषधियों के लेप से युक्त होती है) ठोंक दी जाती है। मैंने सोचा चलो तिब्बत के लामा करते हैं, तो उनसे डरने की कोई बात नहीं है, क्योंकि मैंने वह क्रिया भी सीख रखी है।

यदि यह ऐसा कुछ करेगा, तो मेरा एक हाथ ही इसके लिये बहुत भारी पड़ेगा, क्योंकि मैंने भी मार्शल आर्ट सीख रखा है।

खैर, उसके सेवक बाहर चले गए, उसने उठ कर दरवाजा बंद किया और सीधा पास आकर मेरे चरणों में झुक गया और बोला — गुरु जी! मुझे क्षमा करिये, आपके पास से बिना बताए चला आया। क्या करूं, इतनी जल्दीबाजी में सब कुछ हुआ, कि आपको सूचना भेज ही नहीं सका। आपके आशीर्वाद से फटाफट 'वीजा' बना और मैं यहां आ गया। आपके द्वारा दी गई दीक्षा काम आ गई और मैं यहां लोगों की कुण्डलिनी जाग्रत करने लगा।

— लेकिन मैंने तुझे तो यह क्षमता दी ही नहीं, कि तू किसी की कुण्डलिनी जाग्रत कर सके, यहां तक, कि तेरी कुण्डलिनी भी जाग्रत नहीं की।

— अब गुरु जी! ऐसा मत कहिये। मैं जान गया हूं, कि कुण्डलिनी जागरण करने में कुछ नहीं करना है, सिर्फ आंखों पर अंगुली रखकर दबाने से यह जाग जाती है।

आप जानना चाहेंगे, कि वह क्या क्रिया करता था। वह व्यक्ति की आंखों पर जोर से अंगुली दो मिनट लगाकर उसे बाहर भेज देता। आप किसी की भी आंख पर जोर से अंगुली लगायेंगे, तो तारे दिखाई देंगे ही।

मैं आलोचना नहीं कर रहा हूं, मैं तो यह बता रहा हूं, कि अपनी आजीविका चलाने के लिये लोग ऐसा भी करते हैं और इनके चक्कर में फंस कर बहुत से लोग अज्ञानी ही बने रह जाते हैं और जब आस्था टूटती है, तब वे लोग कहते हैं, कि ढोंगी हैं सारे साधु-संन्यासी, सिर्फ लूटते हैं लोगों को।

आप इस तरह के जाल में न उलझें, इसीलिये आपको ऐसी बात बता रहा हूं और इसीलिये आपके दिमाग में लगे जाले को साफ कर रहा हूं, जिससे आप एक ढोंगी और गुरु में, एक गुरु और सद्गुरु में अन्तर समझ सकें।

शक्तिपात के कई चरण होते हैं, जिन्हें सद्गुरु शिष्य की योग्यता के अनुसार प्रदान करते हैं और जब शिष्य धीरे-धीरे अपनी योग्यता सिद्ध करता हुआ मुक्तिपथ पर आगे बढ़ता रहता है, तो उस समय सद्गुरु तथा उनसे संस्पर्शित योगी व ऋषिगण मिलकर यह निर्णय लेते हैं, कि अब इस शिष्य को दिव्यपात प्रदान करना है या ऊर्ध्वपात या फिर ब्रह्मत्वपात।

— अतः शिष्य को तो अपने शिष्यत्व का पालन बिना कुछ सोचे विचारे, पूर्ण निष्ठा और श्रद्धा भाव से करते रहना चाहिए।

— आगे मैं आप सभी गृहस्थ शिष्यों, साधकों और पाठकों के लिये उपयोगी विशिष्ट दीक्षाओं तथा साधनाओं को स्पष्ट कर रहा हूं, जिनके द्वारा आप अपने जीवन में भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही प्रकार की सम्पन्नता, पूर्णता, आनन्द व ऐश्वर्य प्राप्त कर सकेंगे।

जीवनोपयोगी

अति विशिष्ट दीक्षाएं

स्मरणं गुरू पाद पंकजम्

एक जलती मशाल को तेजी से गोल घेरे में घुमाया जाय, तो उससे बना रोशनी का वृत्त न वास्तविक होता है न अवास्तविक। ठीक उसी प्रकार से यह जीवन श्रृंखला भी अकथनीय है।

– सूक्ष्मता में जाकर देखें तो यही जीवन की सत्यता भी है, सांसारिक चिन्तन से छुटकारा हो भी तो कैसे? मिथ्या देहाभिमान छूटे भी तो कैसे? – व्यर्थ के प्रपंच विनष्ट हों भी तो कैसे? – इनका बोध गुरु के बिना कैसे सम्भव है? शिष्य के लिये सबसे आनन्ददायक क्षण वही होता है जब वह अपने सद्गुरु से एकाकार कर लेता है। और गुरु के लिये भी वही आनन्दप्रद क्षण होता है जब उसका शिष्य पूर्ण रूप से गुरुत्व को अपने हृदय में आत्मसात कर लेता है। जब अनेक जन्मों का पुण्योदय होता है तब शिष्य को गुरु का सान्निध्य प्राप्त होता है और उसी क्षण शिष्य को चाहिये, कि वह पूर्ण रूप से स्वयं को समर्पित कर दे।

दीक्षाओं को शास्त्रों में 108 प्रकार से वर्णित किया गया है। इन 108 दीक्षाओं में भौतिक, शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक सभी प्रकार की समस्याओं का समाधान और सभी प्रकार के सुखों की उपलब्धि छिपी हुई है। स्त्री हो या पुरुष, बालक हो या वृद्ध, चाहे किसी भी समुदाय, जाति अथवा सम्प्रदाय का व्यक्ति क्यों न हो, इन दीक्षाओं को प्राप्त कर सकता है और अपनी मनोकामना पूरी कर सकता है।

व्यक्ति चाहे तो इनमें से एक, दो या कुछ चुनी हुई दीक्षायें या समस्त दीक्षायें अपनी इच्छानुसार ले सकता है –

1.	**सामान्य दीक्षा**	–	शिष्यत्व धारण करने हेतु यह प्रारम्भिक गुरु दीक्षा है।
2.	**ज्ञान दीक्षा**	–	अद्वितीय ज्ञान की प्राप्ति और मेधाशक्ति में वृद्धि हेतु।
3.	**जीवन मार्ग**	–	जीवन के सारे अवरोधों, अशक्तता को समाप्त करके जीवन को चैतन्यता प्रदान करने वाली दीक्षा।
4.	**शाम्भवी दीक्षा**	–	शिवत्व प्राप्त कर शिवमय होने के लिये।

5. चक्र जागरण दीक्षा — समस्त षट्चक्रों को जाग्रत कर अद्वितीय बनाने वाली दीक्षा।
6. विद्या दीक्षा — जड़मति को सुजान कालिदास बना देने वाली दीक्षा।
7. शिष्याभिषेक दीक्षा — पूर्ण शिष्यत्व प्राप्त करने के लिये।
8. आचार्याभिषेक दीक्षा — गुरुत्व प्राप्ति का पहला सोपान।
9. कुण्डलिनी जागरण दीक्षा— इस दीक्षा के सात चरण हैं। इसे एक-एक करके भी लिया जा सकता है या एक साथ भी सातों चरणों की दीक्षा प्राप्त कर सकते हैं।
10. गर्भस्थ शिशु चैतन्य दीक्षा— गर्भस्थ बालक को अपनी इच्छानुसार मनोनुकूल तथा यशस्वी बनाने हेतु दीक्षा।
11. शक्तिपात से कुण्डलिनी जागरण — गुरु तपस्यांश दीक्षा द्वारा प्राप्त कर प्रथम व जीवन का अंतिम सत्य प्राप्त करने हेतु।
12. तत्त्वमसि दीक्षा — जीव को इस दीक्षा के माध्यम से अपने स्वरूप का बोध होता है।
13. धन्वन्तरी दीक्षा — रोग मुक्त होने तथा निरोगी काया प्राप्त करने हेतु।
14. साबर दीक्षा — साबर साधना में सिद्धि हेतु।

15.	सम्मोहन दीक्षा	—	अपने अन्दर अद्भुत सम्मोहन पैदा करने हेतु।
16.	भूगर्भ सिद्धि दीक्षा	—	इस साधना द्वारा भूमिगत धन का ज्ञान सम्भव है।
17.	महालक्ष्मी दीक्षा	—	सुख-सौभाग्य, आर्थिक लाभ की प्राप्ति हेतु।
18.	कनकधारा दीक्षा	—	लक्ष्मी के निरन्तर आगमन के लिये।
19.	अष्टलक्ष्मी दीक्षा	—	धन प्रदायक विशेष दीक्षा।
20.	कुबेर दीक्षा	—	कुबेर की भांति स्थायी सम्पन्नता पाने हेतु।
21.	इन्द्र वैभव दीक्षा	—	इन्द्र जैसा वैभव, यश प्राप्त करने हेतु।
22.	शत्रु संहारक दीक्षा	—	शत्रुता समाप्त करने हेतु।
23.	प्राणवल्लभा अप्सरा दीक्षा	—	प्राणवल्लभा अप्सरा की सिद्धि हेतु।
24.	सामान्य ऋण मुक्ति	—	छोटे-छोटे ऋणों से मुक्त होने हेतु।
25.	ध्यान सिद्धि दीक्षा	—	ध्यान में पूर्णता प्राप्त करने हेतु।
26.	चैतन्य दीक्षा	—	स्फूर्तिदायक, पूर्ण चैतन्यता प्रदान करने वाली दीक्षा।
27.	गन्धर्व दीक्षा	—	गायन व संगीत में दक्षता के लिये।

28.	उर्वशी दीक्षा	—	वृद्धता मुक्ति एवं पूर्ण यौवन प्राप्ति हेतु।
29.	सौन्दर्योत्तमा अप्सरा दीक्षा	—	पुरुष व स्त्री दोनों का ही पूर्ण कायाकल्प करने हेतु।
30.	मेनका दीक्षा	—	विश्वामित्र की तरह पूर्ण साधनात्मक व भौतिक सफलता प्राप्ति हेतु।
31.	स्वर्णप्रभा यक्षिणी दीक्षा	—	आकस्मिक धन प्राप्ति के लिये।
32.	पूर्ण वैभव दीक्षा	—	समस्त प्रकार के आनन्द, वैभव की प्राप्ति हेतु।
33.	साधना दीक्षा	—	पूर्वजन्म की साधना को इस जन्म से जोड़ने हेतु।
34.	तंत्र दीक्षा	—	तान्त्रिक साधनाओं में शीघ्र सफलता हेतु।
35.	बगलामुखी दीक्षा	—	शत्रु को परास्त करने तथा अद्वितीय साहस प्रदान करने वाली दीक्षा।
36.	रसेश्वरी दीक्षा	—	रसायन शास्त्र में दक्षता के लिये तथा पारद-संस्कार विद्या प्राप्त करने हेतु।
37.	अघोर दीक्षा	—	शिवोक्त साधनाओं की पूर्ण सफलता के लिये।

38.	शीघ्र विवाह दीक्षा	—	विवाह सम्बन्धी रुकावटों को मिटाकर शीघ्र विवाह हेतु।
39.	अभीष्ट सिद्धि दीक्षा	—	अभीष्ट की पूर्ति हेतु।
40.	वीर दीक्षा	—	वीर साधना सम्पन्न कर, वीर द्वारा इच्छानुसार कार्य सम्पन्न कराने के लिये।
41.	सौन्दर्य दीक्षा	—	अद्वितीय सौन्दर्य प्रदान करने वाली दीक्षा।
42.	जगदम्बा सिद्धि दीक्षा	—	दुर्गा को सिद्ध करने वाली दीक्षा।
43.	स्वास्थ्य दीक्षा	—	सदैव स्वस्थ व निरोगी बनने हेतु।
44.	ब्रह्म दीक्षा	—	सभी दैवी शक्तियों को प्राप्त कराने वाली दीक्षा।
45.	कर्ण पिशाचिनी दीक्षा	—	सभी के भूत-वर्तमान को जानने हेतु।
46.	सर्प दीक्षा	—	सर्प भय से मुक्ति हेतु।
47.	नवार्ण दीक्षा	—	त्रिशक्ति की सिद्धि के लिये।
48.	गर्भस्थ शिशु चेतना दीक्षा	—	इससे गर्भस्थ बालक के संस्कार महापुरुषों जैसे होते हैं।
49.	चाक्षुष्मती दीक्षा	—	नैत्र ज्योति बढ़ाने के लिये।
50.	काल ज्ञान दीक्षा	—	सही समय पहिचान कर उसका सदुपयोग करने हेतु।

51.	तारा योगिनी दीक्षा	—	तारा योगिनी की सिद्धि हेतु, जिससे जीवन भर अनवरत रूप से धन प्राप्त होता रहे।
52.	रोग निवारण दीक्षा	—	समस्त रोगों को मिटाने हेतु।
53.	पूर्णत्व दीक्षा	—	जीवन में पूर्णता प्रदान करने वाली दीक्षा।
54.	वायु दीक्षा	—	अपने आपको हल्का, हवा जैसा बनाने हेतु।
55.	कृत्या दीक्षा	—	मारक सिद्धि प्रयोग की दीक्षा।
56.	भूत दीक्षा	—	भूतों को सिद्ध करने की दीक्षा।
57.	आज्ञा चक्र जागरण दीक्षा	—	दिव्य-दृष्टि प्राप्ति के लिये।
58.	सामान्य वेताल दीक्षा	—	वेताल शक्ति को प्रसन्न करने के लिये।
59.	विशिष्ट वेताल दीक्षा	—	वेताल को सम्पूर्ण सिद्ध करने के लिये।
60.	पंचांगुली दीक्षा	—	हस्त रेखा शास्त्र में निपुणता प्राप्त करने हेतु।
61.	अनंग रति दीक्षा	—	पूर्ण सौन्दर्य एवं यौवन शक्ति प्राप्त करने के लिये।
62.	कृष्णत्व दीक्षा	—	कृष्ण के समान सम्मोहक व्यक्तित्व प्राप्त करने के लिये।
63.	हेरम्ब दीक्षा	—	गणपति की सिद्धि हेतु।

64.	ह्राद्री, कादी, मदालसा दीक्षा	—	नींद व भूख-प्यास पर नियन्त्रण प्राप्त करने कें लिये।
65.	आयुर्वेद दीक्षा	—	आयुर्वेद के क्षेत्र में विशेष उपलब्धि कें लिये।
66.	वराहमिहिर दीक्षा	—	ज्योतिष के क्षेत्र में विशेष उपलब्धि के लिये।
67.	तांत्रोक्त गुरु दीक्षा	—	गुरु से पूर्णतः तीव्र शक्ति प्राप्ति हेतु।
68.	गर्भ चयन दीक्षा	—	अपने मनोनुकूल गर्भ की प्राप्ति हेतु।
69.	निखिलेश्वरानन्द दीक्षा	—	संन्यास की विशेष भावभूमि की प्राप्ति हेतु।
70.	दीर्घायु दीक्षा	—	लम्बी आयु की प्रप्ति हेतु।
71.	आकाश गमन दीक्षा	—	सूक्ष्म शरीर द्वारा आकाश भ्रमण हेतु।
72.	निर्बीज दीक्षा	—	जन्म-मरण, कर्म-बन्धन की समाप्ति के लिये।
73.	क्रियायोग दीक्षा	—	जीव-ब्रह्म ऐक्य ज्ञान प्राप्ति हेतु।
74.	षोडश अप्सरा दीक्षा	—	जीवन में समस्त सुख-सौभाग्य, सम्पत्ति प्राप्ति के लिये।
75.	षोडशी दीक्षा	—	त्रिपुर सुन्दरी की सिद्धि हेतु।

76.	**सिद्धाश्रम प्रवेश दीक्षा**	—	सिद्धाश्रम में प्रवेश पाने हेतु।
77.	**ब्रह्माण्ड दीक्षा**	—	ब्रह्माण्ड के अनन्त रहस्यों को जानने के लिये।
78.	**पाशुपतेय दीक्षा**	—	स्वयं में व्याप्त पशुता को समाप्त कर शिवमय बनने के लिये।
79.	**कपिला योगिनी दीक्षा**	—	राज्य बाधा एवं नौकरी में आने वाली अड़चनों को दूर करने हेतु।
80.	**गणपति दीक्षा**	—	भगवान गणपति की विशिष्ट कृपा हेतु।
81.	**वाग्देवी दीक्षा**	—	वाक् चातुर्य एवं वाक् सिद्धि के लिये।

इसके अतिरिक्ति अन्य कुछ विशिष्ट उच्चकोटि की दीक्षाएं भी हैं, जिन्हें '**गुरु**' साधक के समर्पण, श्रद्धा, विश्वास और सेवा से प्रसन्न होकर प्रदान करते हैं।

10

जीवनोपयोगी

अति विशिष्ट साधनाएं

घट घट गोरख घट घट मीन

एक बार एक व्यक्ति ने संत से पूछा, कि मैं बहुत बेचैन रहता हूं, कुछ भी करूं शांति नहीं मिलती, बहुत सी साधनायें भी मैंने की है, लेकिन कोई लाभ नहीं मिला।

संत ने पूछा– क्या तुमने गुरु से पूछा?

– 'नहीं' गुरु मिला नहीं, उसी की तलाश कर रहा हूं।

संत ने उत्तर दिया – उसे कहीं ढूढ़ने की आवश्यकता नहीं है,

– वह तुम्हारे अंतस में है।

– तुम्हारे हृदय में स्थापित है।
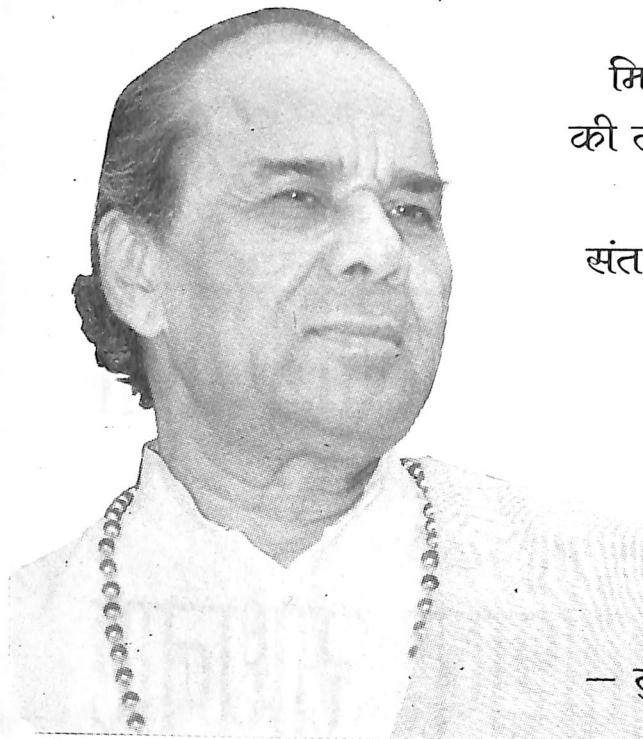
साधना

क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत है और यदि कोई व्यक्ति यह चाहे, कि मैं सभी साधनाएं सम्पन्न कर लूं, तो अपनी यह इच्छा पूरी करने के लिये उसे छः -सात जन्मों तक लगातार यही काम करना होगा, फिर भी उसकी इच्छा पूरी हो जाय, निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता।

साधना के विस्तृत क्षेत्र को देख यह निर्णय लेना भी कठिन हो जाता है, कि अपने किस कार्य के लिये कौन सी साधना की जाये, जो इच्छित फलप्रदायक हो।

आपको इस दुविधापूर्ण स्थिति से बचाने का कार्य एकमात्र आपके मार्गदर्शक, आपके गुरु ही कर सकते हैं।

एक बात आप अपने मन में दृढ़ता से बिठा लें, कि गुरु कोई देहधारी व्यक्ति ही हो सकता है — ऐसा नहीं है, क्योंकि दत्तात्रेय के चौबीस गुरु थे और उनमें निर्जीव वस्तुएं भी हैं। अतः गुरुत्व के ज्ञान से युक्त कोई भी व्यक्ति, कोई भी वस्तु आपका गुरु हो सकता है। यह पुस्तक भी आपकी गुरु है, क्योंकि इसके द्वारा आपको मार्गदर्शन प्राप्त हो रहा है — जो भी ज्ञान प्रदान करे वह गुरु है। हां ! यह अवश्य है, कि जीवित-जाग्रत और चैतन्य गुरु का सान्निध्य बहुत ही दुर्लभ और कई जन्मों के पुण्योदय के फलस्वरूप ही प्राप्त हो सकता है।

लेकिन प्रत्येक व्यक्ति ऐसे चैतन्य पुञ्ज का सान्निध्य प्राप्त कर सके — यह असम्भव नहीं है, किन्तु थोड़ा कठिन अवश्य है। आप चैतन्य गुरु की

कृपा प्राप्त करने के लिये अपने जीवन कृत्यों का पूरी तरह निर्वाह करते हुए प्रयासरत् रहें।

जब भी इस धरा पर किसी तेजस्वी व्यक्तित्व का जन्म होता है, तो वह दिव्य व्यक्तित्व यही प्रयास करता है, कि इस पृथ्वी लोक में प्रत्येक व्यक्ति मेरी चेतना से सम्पृक्त हो और इसके लिये वह तरह-तरह के प्रयास करता है। यदि आप पूर्वकाल से वर्तमान काल तक इस प्रकार के तेजस्विता युक्त व्यक्तित्व के कार्यों का अध्ययन करें, तो आप पूर्णत: स्पष्ट हो जायेंगे, कि इन लोगों ने विभिन्न उपायों को यथा – दीक्षा प्रदान करना, शिविरों का आयोजन करना, अपनी सेवा का अवसर देना तथा पुस्तक लेखन व पत्र-पत्रिकाओं को माध्यम के रूप में चुना।

इस पुस्तक के पृष्ठों पर साधना-क्षेत्र से उन विशिष्ट साधनाओं को चुनकर लिख रहा हूं, जो गर्भस्थ शिशु से लेकर वृद्ध व्यक्ति अर्थात् जन्म से लेकर मृत्यु और इतना ही नहीं मरणोपरान्त भी उपयोगी सिद्ध होंगी।

दीक्षा और साधना एक दूसरे के सहयोगी अवयव हैं, जिस प्रकार दिन और रात एक दूसरे के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए स्वयं अपने आपमें विशिष्ट महत्त्व से युक्त हैं। अत: आप अपने मन में यह संशय न लायें, कि मैं साधना करूं या दीक्षा लूं?

आप दोनों में से कोई एक अर्थात् सिर्फ दीक्षा भी ले सकते हैं या फिर सिर्फ साधना भी कर सकते हैं और ज्यादा उचित होगा, कि आप दीक्षा प्राप्त कर साधना सम्पन्न करें, क्योंकि दिन या केवल रात से ही आप अपना जीवन क्रम पूरा कर लें यह सम्भव नहीं है। अत: आपको जब जैसी सुविधा उपलब्ध हो, दीक्षा प्राप्त कर लें अथवा साधना करने के लिये दृढ़ संकल्पित हो कर साधना कक्ष में बैठ जायें।

साधना के विशाल भण्डार से चुनकर जीवन के प्रत्येक महत्त्वपूर्ण आयामों से सम्बन्धित कुछ विशिष्ट साधनाओं को प्रस्तुत कर रहा हूं। इन साधनाओं के द्वारा आप अपने जीवन में आने वाली बाधाओं का निराकरण कर अपनी जीवन नैय्या को इस भव-सिन्धु में सरलता से गतिमान करते हुए पार ले जा सकेंगे।

⁂ पूर्ण सौन्दर्य (पौरुष एवं स्त्रीत्व) प्राप्ति प्रयोग

सामग्री — अप्सरा माला, अप्सरा यंत्र।

आसन — लाल रंग का सूती आसन।

दिशा — उत्तर। **दिन** — शुक्रवार।

जप संख्या — 11 हजार। **अवधि** — एक दिन।

मंत्र

॥ॐ क्रीं क्रीं कामायै रत्यै अनंगो वद क्रीं क्रीं सौन्दर्याय फट्॥

विधि —

साधक स्वयं शुद्ध वस्त्र धारण कर इत्र से सुगंधित हो, यह साधना सम्पन्न करें। लाल रंग के वस्त्र को लकड़ी के बाजोट पर बिछावें, उस पर तांबे का पात्र रखें, पात्र में कुंकुम से उपरोक्त मंत्र लिखें। उसी पात्र में अप्सरा यंत्र की स्थापना करें।

यंत्र के सामने ग्यारह घी का दीपक लगायें। यंत्र का केसर, अक्षत गुलाब पुष्प से पूजन करें।

हाथ में जल लेकर संकल्प करें — 'मैं अमुक गोत्र, अमुक पिता का पुत्र, अमुक नाम का साधक, पूर्ण सौन्दर्य(पौरुष/स्त्रीत्व) प्राप्ति हेतु अप्सरा साधना कर रहा/रही हूं।'

अप्सरा माला से उपरोक्त मंत्र का 11 माला मंत्र जप करें। मंत्र जप पूर्ण होने के बाद गुलाब पुष्प की माला यंत्र पर चढ़ा दें। प्रयोग समाप्त होने पर साधना के तीसरे दिन यंत्र तथा माला नदी में प्रवाहित कर दें।

⁂ सम्मोहन-वशीकरण साधना

सामग्री — सम्मोहन वशीकरण गुटिका, वशत्व तथा सम्मोहन माला।

आसन — सफेद सूती आसन।

जप संख्या — दस हजार। **अवधि** — पांच दिन।

दिन — शुक्रवार।

दिशा — पूर्व।

मंत्र

॥ॐ क्रीं क्रीं क्रीं अमुकं वश्य करि करि मम आज्ञा
पालय पालय फट्॥

विधि —

साधक स्वच्छ श्वेत वस्त्र पहनें। सफेद वस्त्र बिछाकर उस पर सम्मोहन-वशीकरण गुटिका स्थापित कर दें। गुटिका का पूजन कुंकुंम, पुष्प एवं अक्षत से करें।

जिसे सम्मोहित या वशीकृत करना है उसका नाम कुंकुंम से बाजोट पर बिछे कपड़े पर लिखें, यदि कई लोग हैं, तो '**सर्वजन**' लिखें तथा उस पर '**वशत्व**' रखें। तेल का दीपक लगा दें।

सम्मोहन माला से नित्य 21 माला मंत्र जप करें।

प्रयोग समाप्त होने पर बाजोट पर बिछे कपड़े में सम्मोहन वशीकरण गुटिका, वशत्व गुटिका और सम्मोहन माला को बांध कर शुक्रवार के दिन किसी निर्जन स्थान में डाल दें।

मनोवांछित प्रेमी या प्रेमिका प्राप्ति साधना

सामग्री — मनोकाम्य माला, मनोकाम्य यंत्र।
आसन — पीला रेशमी आसन।
दिशा — उत्तर। **दिन** — बुधवार।
जप संख्या — छः हजार। **अवधि** — ग्यारह दिन।

मंत्र

॥ॐ ह्रीं ह्रीं मनोवांछित अमुकं (नाम) देहि देहि फट्॥

विधि —

साधक पीले वस्त्र धारण करें। बाजोट पर पीले रंग का वस्त्र बिछा दें, उस पर अक्षत रख कर मनोकाम्य यंत्र स्थापित करें। कुंकुंम, अक्षत, पुष्प, अगरबत्ती, धूप व दीप से यंत्र का पूजन करें। यंत्र के समक्ष एक कागज पर प्रेमी/प्रेमिका का नाम लिखें व उसके चारों ओर मिट्टी के चार दीपक लगा दें।

मनोकाम्य माला से पहले दिन उपरोक्त मंत्र का 50 माला मंत्र जप करें। फिर अगले दस दिन तक नित्य यंत्र का पूजन कर, एक माला उपरोक्त मंत्र का जप करें। ग्यारहवें दिन ही यंत्र, माला तथा चारों दीपकों को बाजोट पर बिछे वस्त्र में बांध कर नदी में प्रवाहित करें।

श्रेष्ठ पति या पत्नी की प्राप्ति के लिये

सामग्री — वीरुत यंत्र, वीरुत माला।
आसन — गुलाबी रंग का ऊनी आसन।
जप संख्या — सवा लाख। **अवधि** — 20 दिन।
दिन — सोमवार। **दिशा** — पूर्व।

मंत्र

॥ॐ श्रीं ऐं श्रीं मनोभिलषितं देहि दापय फट्॥

विधि —

साधक गुलाबी वस्त्र धारण कर गुरु पीताम्बर ओढ़ लें। लकड़ी के बाजोट पर गुलाबी वस्त्र बिछावें तथा उस पर वीरुत यंत्र स्थापित करें। यंत्र का पूजन कुंकुम, पुष्प तथा अक्षत से करें। घी का दीपक जलावें।

संकल्प लें — "मैं अमुक गोत्र, अमुक नाम का साधक श्रेष्ठ पति/पत्नी प्राप्ति के लिये यह साधना कर रहा हूं।"

वीरुत माला से उपरोक्त मंत्र का नित्य 125 माला मंत्र का जप करें। जप पूर्ण होने पर साधक/साधिका पांच वर्षीय किसी एक बालक को भोजन करावें। यंत्र व माला किसी पवित्र नदी में अपनी मनोकामना बोलते हुएं प्रवाहित कर दें।

योग्य पुत्र हेतु गर्भस्थ शिशु चैतन्य साधना

सामग्री — पुत्रेष्टि यंत्र, हकीक माला।
आसन — पीला सूती आसन।
जप संख्या — दस हजार। **अवधि** — 5 दिन।
दिन — शनिवार। **दिशा** — पूर्व।

मंत्र

॥ ॐ ह्रीं श्रीं कृष्णः पुत्ररूपेण प्राप्तये ह्रीं ॐ नमः॥

विधि —

साधक (पति या पत्नी सम्भव हो, तो दोनों) शुद्ध वस्त्र धारण करें तथा पीताम्बर ओढ़ लें। पहले गुरु पूजन सम्पन्न करें। पीले रंग का वस्त्र बाजोट पर बिछावें तथा उस पर पुत्रेष्टि यंत्र स्थापित करें। यंत्र का पूजन केसर, अक्षत तथा पुष्प से करें। हकीक माला से पांच दिन में कुल दस हजार मंत्र जप पूर्ण कर लें।

साधना समाप्ति पर साधक शुद्ध मन व हृदय से यंत्र व माला को नदी में प्रवाहित करें। प्रयोग समाप्ति के बाद साधक 21 दिन तक नित्य 11 बार उपरोक्त मंत्र का जप करें।

पूर्ण गृहस्थ सुख साधना

सामग्री— पूर्ण गृहस्थ सुख प्राप्ति यंत्र, कामरूप माला।

आसन — सफेद रेशमी आसन।

जप संख्या — 11 हजार। **अवधि —** सात दिन।

दिशा — पूर्व। **दिन —** सोमवार।

मंत्र

॥ॐ ऐं ऐं पूर्णगृहस्थ सुखाय ह्रीं ह्रीं नमः॥

विधि —

साधक श्वेत वस्त्र धारण करें, गुरु पीताम्बर अवश्य ओढ़ लें। लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछायें, उस पर केसर से स्वस्तिक बना कर 'पूर्ण गृहस्थ सुख प्राप्ति यंत्र' स्थापित करें। संकल्प लें — "मैं अमुक गोत्र, अमुक नाम का साधक पूर्ण गृहस्थ सुख प्राप्ति के लिये साधना कर रहा हूं।"

यंत्र का पूजन कुंकुंम, अक्षत व पुष्प से करें। कामरूप माला से सात दिन में ग्यारह हजार मंत्र जप सम्पन्न करें। साधना समाप्त होने पर साधक यंत्र तथा माला किसी निर्जन स्थान में डाल दें।

अवधि — सात दिन।

मन की इच्छाएं शीघ्र पूर्ण करने की साधना

सामग्री	—	मनोकामना सिद्धि यंत्र, मनोकामना माला।			
आसन	—	सफेद ऊनी आसन।			
दिन	—	बुधवार	**दिशा**	—	उत्तर।
जप संख्या	—	दस हजार।	**अवधि**	—	तीन दिन।

मंत्र

।। ॐ ह्रीं श्रीं मानस सिद्धि करि श्रीं ह्रीं नमः।।

विधि —

साधक पीले वस्त्र तथा गुरु पीताम्बर धारण कर लें। लकड़ी के बाजोट पर 'मनोकामना सिद्धि यंत्र' स्थापित करें। यंत्र का पूजन कुंकुम, अक्षत व पुष्प से करें। साधक अपने मन की इच्छाएं व्यक्त करें तथा एक कागज पर अपनी मनोकामना लिख कर यंत्र के नीचे रख दें।

साधक मनोकामना माला से तीन दिन में दस हजार मंत्र जप सम्पन्न करें। साधना पूर्ण होने पर यंत्र व माला नदी में प्रवाहित कर दें।

रोग मुक्ति साधना

सामग्री	—	रोग मुक्ति यंत्र, धन्वन्तरी माला।			
आसन	—	पीला सूती आसन।			
दिन	—	बुधवार	**दिशा**	—	उत्तर।
जप संख्या	—	75 माला।	**अवधि**	—	तीन दिन।

मंत्र

।। ॐ रं रुद्र रोगनाशाय नमः।।

विधि —

साधक पीली धोती तथा गुरु पीताम्बर पहनकर उत्तर दिशा की ओर मुख करके बैठें। लकड़ी के बाजोट पर पीला वस्त्र बिछावें तथा उस पर यंत्र स्थापित कर, उसका पूजन केसर और पुष्प से करें। यंत्र के सामने एक कागज पर रोगी का नाम लिखकर, उस पर आटे से बना दीपक प्रज्ज्वलित

करके रखें। नित्य धन्वन्तरी माला से 25 माला मंत्र जप करें तथा नित्य आटे का नया दीपक बनाएं। साधना समाप्त होने पर सभी दीपक, कागज, माला व यंत्र किसी पीले कागज में लपेट कर गड्ढे में दबा दें अथवा किसी भैरव मंदिर में चढ़ा दें।

अकाल मृत्यु निवारण साधना

सामग्री — अकाल मृत्यु निवारण यंत्र, रुद्राक्ष माला।
आसन — सफेद ऊनी आसन।
दिन — सोमवार। **दिशा** — उत्तर।
जप संख्या — 21 हजार। **अवधि** — पांच दिन।

मंत्र

॥ ॐ ह्लीं ह्लौं अकालमृत्यु हरणाय ह्लौं फट्॥

विधि —

साधक पीले वस्त्र तथा गुरु पीताम्बर धारण कर साधना में बैठें। लकड़ी के बाजोट पर श्वेत वस्त्र बिछायें तथा गुलाब पुष्पों पर '**अकाल मृत्यु निवारण यंत्र**' स्थापित करें। यंत्र का पूजन कुंकुंम, अक्षत तथा पुष्प से करें।

घी का दीपक लगाएं। रुद्राक्ष माला से पांच दिन में इक्कीस हजार मंत्र जप सम्पन्न करें। प्रयोग पूर्ण होने वाले दिन रुद्राक्ष की माला में जो रुद्राक्ष के दाने हैं, उनसे ही उपरोक्त मंत्र उच्चारण करते हुए 108 आहुतियां प्रदान करें।

यंत्र तथा हवन की राख को किसी नदी में प्रवाहित कर दें।

महालक्ष्मी साधना

सामग्री — महालक्ष्मी यंत्र, लघु शंख, कमलगट्टे की माला।
आसन — लाल आसन।
दिन — बुधवार। **दिशा** — उत्तर।
जप संख्या — बीस हजार। **अवधि** — चार दिन।

मंत्र

॥ ॐ श्रीं धनधान्याधिपत्यै पूर्णत्व लक्ष्मी सिद्धयै नमः॥

विधि —

साधक पीले वस्त्र धारण करें। लकड़ी के बाजोट पर लाल रंग का वस्त्र बिछायें तथा उस पर महालक्ष्मी यंत्र स्थापित करें। यंत्र के सामने लघु शंख स्थापित करें। यंत्र और शंख का पूजन करें।

उपरोक्त मंत्र का 108 बार उच्चारण करते हुए शंख में अक्षत (चावल का दाना) डालें। कमलगट्टे की माला से नित्य 51 माला उपरोक्त मंत्र जप करें। नित्य मंत्र जप पूर्ण होने पर अक्षत भरे शंख को हाथ में लेकर खड़े होकर 10 मिनट तक उपरोक्त मंत्र का जप करें। चावल को नित्य मंत्र जप पूर्ण होने पर शंख में से निकाल कर एक पोटली में रखते जायें।

प्रयोग समाप्त होने पर चावल, यंत्र, शंख और माला को नदी में विसर्जित कर दें।

यश, प्रतिष्ठा, राज्य, सम्मान एवं जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सर्वोच्च सफलता हेतु साधना

सामग्री— सर्वार्थ सिद्धि यंत्र, सर्वार्थ सिद्धि माला, प्रराजस।

आसन — सफेद ऊनी आसन।

दिन — सोमवार। **दिशा —** उत्तर।

जप संख्या — 21 हजार। **अवधि —** सात दिन।

मंत्र

।। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं सर्वत्र साफल्य क्लीं श्रीं ह्रीं स्वाहा।।

विधि —

साधक सफेद वस्त्र तथा गुरु पीताम्बर धारण करें।

लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछायें तथा उस पर पीले पुष्पों के ऊपर सर्वार्थ सिद्धि यंत्र स्थापित करें। यंत्र का पूजन कुंकुम, अक्षत, पुष्प से करें तथा यंत्र के सामने '**प्रराजस**' रखें। '**प्रराजस**' का सिर्फ कुंकुम से पूजन करें।

खड़े होकर अपने बायें हाथ में प्रराजस लें और दाहिने हाथ से माला

द्वारा सात दिनों में 30 माला मंत्र जप करें। साधना आरम्भ करने पर साधक फलाहार ग्रहण करें, तो ज्यादा उचित होगा; साथ ही पूरे दिन गुरु मंत्र का मानसिक जप करते रहें तथा साधना सम्पन्न होने तक यह नियम बनाए रखें।

आठ दिन बाद प्राजस, माला और यंत्र नदी में प्रवाहित कर दें।

मनोनुकूल गर्भ चयन साधना

सामग्री– मनोनुकूल गर्भ चयन यंत्र, सफेद हकीक मा

आसन – सफेद सूती आसन।

दिन – बुधवार। **दिशा –** पश्चिम।

जप संख्या – दस हजार। **अवधि –** तीन दिन।

मंत्र –

॥ ॐ चं छं मनोवांछित गर्भगतिं ॐ॥

विधि –

साधक सफेद वस्त्र एवं गुरु पीताम्बर धारण करें।

लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछावें, उस पर कुंकुम से अपना नाम लिखें। कुंकुम से लिखे नाम के ऊपर '**मनोनुकूल गर्भ चयन यंत्र**' का स्थापन करें। यंत्र का पूजन करें।

यंत्र के समक्ष घी का दीपक तथा धूप लगाएं। उस पर हकीक माला रख दें और माला का भी पूजन करें। हकीक माला से तीन दिन तक नित्य 31 माला मंत्र जप सम्पन्न करें।

साधना समाप्त होने पर एक छोटे बालक को भोजन करावें तथा हकीक माला और यंत्र को कपड़े में बांधकर किसी नदी में प्रवाहित कर दें।

किसी के भी मन की बात जानने की साधना

सामग्री– मनस्व यंत्र, मनस्व माला।

आसन – हरा रेशमी आसन।

दिन – बुधवार। **दिशा –** पूर्व।

जप संख्या – दस हजार। **अवधि –** पांच दिन।

मंत्र

।। ॐ क्रीं क्रीं क्लीं क्रीं क्रीं ॐ फट्।।

विधि —

साधक सफेद वस्त्र तथा गुरु पीताम्बर धारण कर साधना सम्पन्न करें।

साधक यह साधना प्रात:काल ही करें। साधना प्रारम्भ करने से पूर्व साधक तीन बार प्राणायाम करें।

लकड़ी के बाजोट पर हरा वस्त्र बिछाकर उस पर किसी ताम्र पात्र में अक्षत रख कर '**मनस्व यंत्र**' व '**मनस्व माला**' स्थापित करें। यंत्र तथा माला का पूजन करें।

इसके पश्चात् तीन दिन में दस हजार उपरोक्त मंत्र जप मनस्व माला से सम्पन्न करें। मंत्र जप करते समय अपना ध्यान यंत्र पर केन्द्रित रखें।

यंत्र व माला को साधना के पश्चात् किसी नदी में प्रवाहित कर दें।

साधक प्राणायाम और ध्यान की प्रक्रिया को अपने दैनिक जीवन में शामिल करें। इससे साधक में यह क्षमता निरन्तर बनी रहती है।

❁ *काल ज्ञान प्राप्ति साधना*

सामग्री — महाकालत्व यंत्र, विशेष मंत्रों से प्राण प्रतिष्ठित महाकालत्व माला।

आसन — पीला ऊनी आसन।

दिन — शुक्रवार। **दिशा** — उत्तर।

जप संख्या — दस हजार। **अवधि** — छ: दिन।

मंत्र

।। ॐ क्लीं ऐं कालत्व विजयाय क्लीं ऐं फट्।।

विधि —

साधक पीले रंग की धोती तथा गुरु पीताम्बर धारण कर यह साधना सम्पन्न करें।

लकड़ी के बाजोट पर पीला वस्त्र बिछावें, उस पर महाकालत्व यंत्र स्थापित करें, यंत्र का कुंकुम, पुष्प व अक्षत से पूजन करें। साधक उत्तराभिमुख होकर छः दिन में दस हजार मंत्र जप पूर्ण करें।

नित्य मंत्र जप समाप्त कर नैवेद्य चढ़ायें, जिसे स्वयं ही ग्रहण करें।

ग्यारहवें दिन माला व यंत्र को नदी में प्रवाहित कर दें। सवा महीने तक नित्य 21 बार उपरोक्त मंत्र का जप करें।

कुण्डलिनी जागरण साधना

सामग्री— कुण्डलिनी जागरण यंत्र, चेतना माला।

आसन — पीला सूती आसन।

जप संख्या — सवा लाख। **दिशा** — पूर्व।

जप संख्या — सवा लाख। **अवधि** — बीस दिन।

मंत्र

॥ॐ ह्रीं विशुद्धाय कुलकुण्डलिन्यै फट्॥

विधि —

साधक सफेद वस्त्र एवं गुरु पीताम्बर धारण करें।

लकड़ी के बाजोट पर पीला वस्त्र बिछा कर उस पर 'कुण्डलिनी जागरण यंत्र' स्थापित करें। गुरु चित्र व यंत्र भी स्थापित करें।

गुरु पूजन करें तथा एक माला गुरु मंत्र का जप करें। कुण्डलिनी जागरण यंत्र का पूजन करें। नित्य निश्चित संख्या में मंत्र जप करते हुए बीस दिनों में उपरोक्त मंत्र का सवा लाख मंत्र जप पूर्ण करें।

21 वें दिन 108 बार उपरोक्त मंत्र की आहुति घी से देकर कुण्डलिनी जागरण यंत्र व चेतना माला गुरुवार के दिन नदी या सरोवर में विसर्जित कर दें।

भूतकाल प्रत्यक्ष दर्शय साधना

सामग्री — भूतकाल प्रत्यक्ष दर्शय यंत्र व नीली हकीक माला।

आसन — नीला।

दिन	—	सोमवार।	**दिशा**	—	उत्तर।
जप संख्या	—	नित्य 51 माला।	**अवधि**	—	आठ दिन।

मंत्र

॥ ॐ ऐं महाकालाय भूतकालं दर्शय दर्शय ऐं फट्॥

विधि —

साधक नीली धोती तथा गुरु पीताम्बर धारण करें।

लकड़ी के बाजोट पर नीला वस्त्र बिछा लें व ताम्र प्लेट में काजल से उपरोक्त मंत्र लिख कर उस पर 'भूतकाल प्रत्यक्ष दर्शय यंत्र' स्थापित करें।

साधक यंत्र की ओर स्थिर दृष्टि से देखते हुए नीली हकीक माला से उपरोक्त मंत्र का 51 माला मंत्र जप करें। माला पूरे दिन गले में धारण करके रखें।

सम्पूर्ण साधना काल में साधक पूर्ण पवित्रता के साथ रहें। साधक अपने साधना स्थल पर ही सोयें।

साधना के समापन दिवस अर्थात् आठवें दिन साधक यंत्र व माला को नदी या सरोवर में प्रवाहित कर दें अथवा किसी मन्दिर में जाकर रख दें।

कायाकल्प साधना

सामग्री	—	कायाकल्प यंत्र तथा प्राकल्प्य माला।			
आसन	—	पीला ऊनी आसन।			
दिन	—	बुधवार।	**दिशा**	—	उत्तर।
जप संख्या	—	पच्चीस माला।	**अवधि**	—	दस दिन।

मंत्र

॥ ॐ ह्रीं ह्रीं श्रियै नमः ह्रीं ह्रीं ॐ॥

विधि —

साधक पीला वस्त्र तथा गुरु पीताम्बर धारण करें।

लकड़ी के बाजोट पर पीला वस्त्र बिछाएं तथा उस पर कुंकुम से 'ॐ' लिखें। बाजोट पर लिखे 'ॐ' पर पीले पुष्प रख कर कायाकल्प यंत्र का

स्थापन करें। यंत्र का पूजन केसर, दूध तथा पुष्प चढ़ा कर सम्पन्न करें।

उपरोक्त मंत्र की नित्य पच्चीस (25) माला मंत्र जप प्राकल्प्य माला से करें। साधक पूरे साधना काल में केवल एक समय ही भोजन करें।

साधना पूर्ण होने पर साधक यंत्र व माला को बाजोट पर बिछे पीले वस्त्र में बांध कर, किसी नदी में विसर्जित कर दें।

शिक्षा में श्रेष्ठता प्राप्ति हेतु साधना

सामग्री – सर्वकार्य सिद्धि यंत्र, हल्ट हकीक तथा श्रेयत्व माला।

आसन – हरा रेशमी आसन।

दिन – बुधवार। **दिशा** – उत्तर।

जप संख्या – सात हजार। **अवधि** – तीन दिन।

मंत्र

॥ ॐ ह्रीं सर्वोच्च सिद्धिं ह्रीं फट्॥

विधि –

साधक सफेद वस्त्र एवं गुरु पीताम्बर धारण करें।

लकड़ी के बाजोट पर हरा वस्त्र बिछाएं तथा उस पर सर्वाकार्य सिद्धि यंत्र स्थापित करें। यंत्र का पूजन कुंकुम, अक्षत तथा पुष्प से करें। यंत्र के समक्ष घी का दीपक तथा धूप लगाएं।

तीन दिनों में श्रेयत्व माला से सात हजार उपरोक्त मंत्र जप सम्पन्न करें। मंत्र जपते समय अपने बायें हाथ में हल्ट हकीक को रखें । चौथे दिन यंत्र, हल्ट हकीक व माला को नदी में प्रवाहित कर दें।

प्रबल शत्रुहन्ता साधना

सामग्री – शत्रुहन्ता यंत्र व काली हकीक माला।

आसन – काला सूती आसन।

दिन – शनिवार।

अवधि – नौ दिन।

जप संख्या – पचपन (55) माला नित्य।

मंत्र

॥ॐ ह्रीं शत्रु परास्ताय फट्॥

विधि —

साधक पीले वस्त्र धारण करें।

लकड़ी के बाजोट पर काला वस्त्र बिछाकर, एक ताम्र पात्र में 'शत्रुहन्ता यंत्र' स्थापित करें। नित्य यंत्र का पूजन कुंकुम, अक्षत तथा पांच काली मिर्च के दानें चढ़ा कर करें।

काली हकीक माला से उपरोक्त मंत्र की 11 माला मंत्र जप पूर्व की ओर, 11 माला पश्चिम की ओर, 11 माला उत्तर की ओर, 11 माला दक्षिण की ओर तथा 11 माला पुनः पूर्व की ओर मुंह करके करना है, जिससे शत्रुता का नाश सम्पूर्ण रूप से हो सके। यही क्रम नौ दिन तक चलेगा।

दसवें दिन यंत्र के साथ सभी काली मिर्च के दानें रख कर बाजोट पर बिछे वस्त्र में बांधें तथा उसे किसी निर्जन' स्थान में दबा दें अथवा नदी या तालाब में विसर्जित करें।

प्रबलतम वशीकरण साधना

सामग्री — वशीकरण यंत्र व वशीकरण माला।
आसन — पीला ऊनी आसन।
दिन — बुधवार। **दिशा** — उत्तर।
जप संख्या — नित्य 21 माला। **अवधि** — तीन दिन।

मंत्र

॥ॐ क्लौं आदिपुरुषाय अमुकं (नाम) वशमानाय फट्॥

विधि–

साधक पीले वस्त्र व गुरु पीताम्बर धारण करें। लकड़ी के बाजोट पर पीला वस्त्र बिछा कर उस पर केसर से उस व्यक्ति का नाम लिखें, जिसका वशीकरण करना है। केसर से लिखे नाम के ऊपर वशीकरण यंत्र का स्थापन करें तथा यंत्र पर भी उसी व्यक्ति का नाम लिखें। यंत्र का पूजन इत्र तथा केसर

से करें। साधक वशीकरण माला से नित्य 21 माला मंत्र जप करें। साधनाकाल में साधक स्वयं भी सुगंधित इत्र लगा कर रहें।

साधना पूर्ण होने पर माला व यंत्र नदी में प्रवाहित कर दें तथा वह वस्त्र जिस पर आपने नाम लिखा है, उसे भी 5 गुलाब के पुष्प रख कर नदी में प्रवाहित कर दें।

पूर्ण तनाव मुक्ति हेतु साधना

सामग्री – चैतन्य मंत्र तथा चैतन्य माला।
आसन – सफेद सूती आसन।
दिन – गुरुवार। **दिशा** – उत्तर।
जप संख्या – दस हजार। **अवधि** – पांच दिन।
मंत्र

॥ ॐ हुं हुं हुं ह्लौं ह्रीं ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा॥

विधि –

साधक पीले वस्त्र तथा गुरु पीताम्बर धारण करें।

लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछायें तथा उस पर चैतन्य यंत्र का स्थापन करें। यंत्र का पूजन धूप, दीप, कुंकुम, अक्षत एवं पुष्प से करें। चैतन्य माला से पांच दिनों में दस हजार मंत्र जप सम्पन्न करें। नित्य दूध का बना नैवेद्य अर्पित करें, जिसे स्वयं ही ग्रहण करें।

साधना समाप्त होने पर माला व यंत्र को नदी में विसर्जित कर दें।

इस पुस्तक में वर्णित सूत्रों को अपना कर साधक या कोई भी व्यक्ति अपने जीवन को सफल, सुखी एवं सम्पन्न बनाते हुए अपनी इच्छाओं को भी पूर्ण कर सकता है।

इस पुस्तक में दिये गए प्रयोग या दीक्षाओं के सफल होने के लिए साधक का निष्ठावान होना आवश्यक है।

जीवन को निष्कंटक बनाने का रहस्य

ये छह मांत्रोक्त दीक्षाएं

पूज्यपाद गुरुदेव के वरद हस्त तले

१. गुरु दीक्षा : प्रारम्भिक एवं आवश्यक दीक्षा, प्रत्येक साधना की नींव।

२. ज्ञान दीक्षा : जन्म- जन्मांतरों के कर्मों को काटने की दीक्षा। उच्च कोटि की दीक्षाओं के लिए प्रथम चरण।

३. धन्वन्तरी दीक्षा : जिससे शरीर रोग रहित और बलवान बन सके। जीवन व साधनाओं में सफलता के लिए आवश्यक।

४. महालक्ष्मी दीक्षा : जीवन में आध्यात्मिक उन्नति के साथ ही साथ आवश्यक है भौतिक समृद्धता, इसी का उपाय है यह दीक्षा

५. शक्तिपात द्वारा कुण्डलिनी जागरण : लम्बी साधनाओं की अपेक्षा कुण्डलिनी जागरण की सहज पद्धति। समर्थ व सक्षम पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा।

६. भुवनेश्वरी दीक्षा : केवल मात्र एक साधना, एक दीक्षा से भोग व मोक्ष दोनों ही प्राप्त कर लेने का अवसर।

हर गृहस्थ के लिए आवश्यक एवं महत्वपूर्ण हैं ये दीक्षाएं

नोट - दीक्षा के समय व दिन टेलीफोन पर अथवा पत्र द्वारा पूर्व निर्धारित कर लें

सम्पर्क

गुरुधाम,
३०६- कोहाट एन्क्लेव,
पीतमपुरा, नई दिल्ली-३४,
फोनः०११-७१८२२४८,

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान,
हाईकोर्ट कॉलोनी,
जोधपुर(राज.) ३४२००१,
फोनः ०२९१-३२२०६

अनमोल धरोहर

पूज्यपाद गुरुदेव के वाणी में अटूट ज्ञान का संग्रह . . . **"तमसो मा ज्योतिर्गमय"** . . . की यात्रा . . . जिसके सुनने मात्र से जीवन में आनन्द व्याप्त होने लगता है . . . जीवन के रहस्य को उजागर करता हुआ; अद्वितीय संग्रह . . . सिर्फ आपके लिए ही नहीं अपितु आपकी आने वाली पीढ़ियों के लिए संजोकर रखने वाली अमूल्य धरोहर है . . .

नवीनतम कैसेट्स

(जो नये रूप में अभी-अभी तैयार हुई हैं।)

गुरु वाणी	**गुरु हमारी जाति है**	**सांस सांस में गुरु बसे**
गुरु बिन रह्यो न जायं	**गुरु ह्रदय स्थापन प्रयोग**	**गुरु पूजन**
ध्यान योग	**साधना सूत्र**	**अष्ट सिद्धि**
तन्त्र रहस्य	**महालक्ष्मी साधना**	**अक्षय पात्र साधना**
कायाकल्प	**ॐ मणि पद्मे हुं**	**ध्यान, धारणा और समाधि**

और ये दिव्यतम कैसेट्स . . .

शिव सूत्र	कालज्ञान प्रयोग	सशरीर सिद्धाश्रम प्राप्ति प्रयोग
शिव पूजन	कालज्ञान विवरण	पाशुपतास्त्रेय प्रयोग (३ भाग)
पराविज्ञान	दुर्लभ गुरु भजन	निखिलेश्वर महोत्सव (६ भाग)
संध्या आरती	हिप्नोटिज्म रहस्य	मैं खो गया तुम भी खो जाओ
पारद विज्ञान	गुरु साधना चिन्तन	मैं अपना पूर्व जीवन देख रहा हूं
पूर्णत्व सिद्धि	ब्रह्माण्ड भेदन प्रयोग	सहस्राक्षी लक्ष्मी विवेचना एवं प्रयोग
राजयोग दीक्षा	प्राणतत्त्व जागरण प्रयोग	शरीरस्थ देवता स्थापित सिद्धि प्रयोग
निखिल स्तवन	षोडशी त्रिपुर साधना	मनोकामना पूर्ति प्रयोग एवं गुरु पूजन
लक्ष्मी मेरी चेरी	पारदेश्वरी लक्ष्मी प्रयोग	पारदेश्वर शिवलिंग पूजन तथा रसेश्वरी दीक्षा
पूर्णत्व ब्रह्म दीक्षा	मनोकामना पूर्ति प्रयोग	
कुण्डलिनी योग	पूर्ण पौरुष प्राप्ति प्रयोग	

ऑडियो कैसेट प्रति - ३०/-

(डाक व्यय 24/- अतिरिक्त)

5 कैसेट्स से अधिक कैसेट्स मंगाने पर डाक व्यय संस्था वहन करेगी।

सम्पर्क

मंत्र शक्ति केन्द्र, डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी, जोधपुर (राज.), फोन : 0291-32209

सिद्धाश्रम,306, कोहाट एन्क्लेव, पीतमपुरा, दिल्ली, फोन: 011-7182248,फेक्स:011-7196700

ज्ञान और चेतना की अनमोल कृतियां
पूज्यपाद गुरुदेव
डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली जी
द्वारा रचित अनमोल ग्रंथ . . .

कुण्डलिनी यात्रा		दैनिक साधना विधि	30/-
मूलाधार से सहस्रार तक	150/-	झर झर अमरत झरै	30/-
फिर दूर कहीं पायल खनकी	150/-	तांत्रोक्त गुरु पूजन	30/-
गुरु गीता	150/-	गुरु सूत्र	30/-
ज्योतिष और काल निर्णय	150/-	मैं बांहे फैलाये खड़ा हूं	20/-
निखिलेश्वरानन्द स्तवन	120/-	सिद्धाश्रम साधना सिद्धि	20/-
हस्तरेखा विज्ञान		गुरु संध्या	20/-
व पंचांगुली साधना	120/-	अप्सरा साधना	20/-
ध्यान, धारणा और समाधि	120/-	दुर्लभोपनिषद	20/-
निखिल सहस्रानाम	96/-	बगलामुखी साधना	20/-
विश्व की अलौकिक साधनाएं	96/-	धनवर्षिणी तारा	20/-
निखिलेश्वरानन्द शतकम	75/-	महाकाली साधना	20/-
अमृत बूंद	60/-	शिष्योपनिषद	20/-
स्वर्ण तंत्रम	60/-	भुवनेश्वरी साधना	20/-
लक्ष्मी प्राप्ति	60/-	दीक्षा संस्कार	20/-
निखिलेश्वर चिन्तन	40/-	षोडशी त्रिपुर सुन्दरी	20/-
सिद्धाश्रम का योगी	40/-	हंसा उड़ हु गगन की ओर	20/-
निखिलेश्वरानन्द रहस्य	40/-	साधना एवं सिद्धि	15/-
आधुनिक हिप्नोटिज्म		गुरु और शिष्य	15/-
के १०० स्वर्णिम सूत्र	60/-	नारायण सार	15/-
प्रत्यक्ष हनुमान सिद्धि	40/-	नारायण तत्व	15/-
भैरव साधना	40/-	गुरुदेव	15/-
स्वर्णिम साधना सूत्र	40/-	सिद्धाश्रम	15/-
मातंगी साधना	40/-	दीक्षा	15/-

सम्पर्क

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान, डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कॉलोनी, जोधपुर फोन 0291-432209, फैक्स : 0291-432010
सिद्धाश्रम, 306 कोहाट एन्क्लेव, पीतमपुरा, नई दिल्ली फोन :011-7182248, फैक्स : 011-7196700

. . . यह
एक ग्रंथ ही नहीं,
किसी भी रजकण को
आकाश तक उठा देने की क्रिया
है, एक हंस को मानसरोवर तक
ले जाने का प्रयास है और छोटे से
तलैया रूपी जीवन को आनंद का असीमित
समुद्र बना देने की घटना है।

क्या ईश्वर ने मनुष्य को जीवन इसलिए दिया है, कि वह सामान्य सा बना रह कर पग-पग पर बाधाओं का सामना करता हुआ, दुखी, हताश, निराश होते हुए इसे अंत में एक मुट्ठी राख में बदलने की चिर शाश्वत नियति को स्वीकार कर ले? मृत्यु तो एक दिन सबकी होती ही है, किन्तु इस मृत्यु से पूर्व व्यक्ति नित्य ही तिल-तिल करके क्यों उसका दारुण कष्ट सहन करे? मनुष्य का जन्म अपने आप में इतनी सामान्य घटना तो नहीं हो सकती, और न होनी चाहिए।

वास्तव में न्यूनता व्यक्ति में नहीं है, वरन इस बात में है कि उसके जीवन में 'गुरु' का चिंतन नहीं रह गया है। इस बात का चिंतन नहीं रह गया है कि कैसे उस व्यक्तित्व की खोज की जाए और उसके चरणों को अपनी भावना से पखारा जाए। गुरु को प्राप्त कर उनके चरणों में अपने सिर को झुकाने का अर्थ ही है, कि उसी क्षण से व्यक्ति के जीवन को समस्त दुखों, तनावों, अभावों एवं पीड़ाओं की समाप्ति की क्रिया प्रारम्भ हो गई है क्योंकि विनीत होने का अर्थ है उसे सद्गुरु से ज्ञान व साधना रूपी वे सूत्र मिल जाना जो उसके जीवन का मल-दोष समाप्त कर, जीवन को स्वर्णिम बनाने की सामर्थ्य रखते हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ इसी प्रकार अनेक स्वर्णिम सूत्रों का एक दुर्लभ संग्रह है जो सूत्र साधकों को अनायास ही उपलब्ध हो रहे हैं। साधनाएं कैसे प्राप्त करें, कहां से प्राप्त करें, किस प्रकार से प्राप्त करें, इन्हीं तत्वों का समावेश इस ग्रंथ में किया गया है। किसी रचना को 'ग्रंथ' की संज्ञा उसके कागजों की संख्या अथवा भारी भरकम स्वरूप से नहीं दी जा सकती, अपितु उस ज्ञान से दी जाती है जो उसमें समाहित हो।

. . . और इस दृष्टि से यह कृति, ज्ञान की दृष्टि से यह ग्रंथ पृथ्वी से भी ज्यादा भारी, आकाश से भी ज्यादा ऊंचा, समुद्र से भी अधिक गहरा तथा मानसरोवर से भी अधिक पवित्र है, क्योंकि इसका एक-एक अक्षर अपने में हजार-हजार अर्थ समेटे हुए है।